लक्ष्मण—भ्राता जी ! आज आप कुछ अधिक अधीर से प्रतीत होते हैं; इसका क्या कारण है ?

राम—क्या बताऊं भाई ! समय का परिवर्तन देख कर बड़ा ही आश्चर्य हो रहा है ! ससार रूपी चक्र ने हसते हुये मुखड़े मलान कर दिये, प्रसन्नता से चमकती हुई आंखें आँसुओं से तर हो गई सदा सन्तुष्ट रहने वाले मन अधीर हो उठे :—

जो शोक म आतुर न हो सूरत नहीं देखी ।
हसती हुई संसार में मूरत नहीं देखी ।।
वह दिल कहां जो रज से घबरा न गया हो ।
कह कौन खिला फूल जो मुरझा न गया हो ।।

लक्ष्मण—हां प्रभो ! जो साहस किसी भी दशा में न छूटा था आज वह भी छूट गया; अनेक प्रकार की चोटों का सहन करने वाला हृदय भी वियोग की चोट से टूट गया । यह कैसा आश्चर्य है :—

मोह था जिस को न सुख से, राज से, दरबार से ।
जो चला आया था नाता तोड़ कर घर बार से ।।
आज तक विचलित हुआ था जो न दुख की मार से ।
आज वह मन दब रहा संकटों के भार से ।।

राम—विधाता की गति ऐसी ही विचित्र है लक्ष्मण :—

सुख की घड़ी के साथ है दुखों का साथ भी ।
निकला है दिन जहाँ, वहां होती है रात भी ।।

सुग्रीव—परन्तु महाराज ! वानरों को गये हुए बहुत समय बीत गया अब तो वे .....

लक्ष्मण—(बात काट कर) सुग्रीव जी ! दूसरे का कार्य ऐसा ही होता है, पराई अग्नि में कूद कर कौन प्राण खोता है ?

राम—ऐसा न कहो भाई ! मुझे पूर्ण विश्वास है कि हनुमान जी निराश होकर न आयेंगे, जानकी की सुधि अवश्य लायेंगे !

सुग्रीव—(प्रसन्न होकर) लीजिये महाराज ! हनुमान जी वानरों सहित आ रहे हैं।

लक्ष्मण—और मुख की प्रसन्नता कह रही है कि जानकी का पता ला रहे हैं।

राम—क्यों न हो ! पवनसुत का ऐसा ही प्रताप है।

हनुमान—(राम के चरणों में गिरकर) महाराज प्रणाम !

सब—बोलो ! अञ्जनीकुमार हनुमान की जय !

राम—कहो हनुमान जी ! कुशल पूर्वक तो आये ?

हनुमान—हां प्रभो ! जहां आपके चरणों का प्रताप है वहाँ संकट कैसे आ सकता है ?

राम—तो बताओ ! जानकी को क्या खबर लाये ?

हनुमान—सुनिये प्रभो !

गाना (तर्ज—हे राज ऋषि क्या कारण है···)

जो देखा नाथ ! कहूं क्योंकर कहते प्रभु जान फड़कती है।
वह कोकिल बीच तड़पती है अग्नि चहु ओर भड़कती है॥
घन उमड़-उमड़ कर गरजत हैं, मेघा थम थम कर बरसत हैं।
माता जी डर-डर मरती हैं, बिजली घन बीच कड़कती है॥
इक निर्जन वन में उपवन है, सुख का न कोई भी साधन है।
मन मारे माता रहती हैं, विरहानल नाथ भड़कती है॥
दिन रात निशाचर दुख देते, सन्ताप प्राण हर हर लेते।
रावण के निठुर वचन सुन-सुन, नित छाती कुशल धड़कती है॥

राम—आह सीते ! तुम इतना कष्ट किस प्रकार सहती होगी ? भयंकर राक्षसों के बीच कैसे रहती होगी ?

हनुमान—इतना ही नहीं प्रभो ! आपके वियोग में एक-एक पल कल्प के समान हो रहा है, रात को दिन करना [illegible] हो रहा है।

सूख कर कांटा बनी है धीर प्रा[illegible] में नहीं।
मन लुटा बैठा है साहस, नींद आंखों में नहीं॥
रट लगी है आप के ही नाम की हर सांस में।
प्राण हैं अटके हुए केवल मिलन की आस में॥

राम—सीते ! तुम सचमुच आदर्श नारी हो; पतिव्रत धर्म की मूर्ति और स्त्री जाति क लिये कल्याणकारो हा !:—

जब तलक चलता रहेगा चक्र इस ससार का।
मान लोगों मे रहेगा, धर्म के व्यवहार का॥
जब तलक आकाश में चमकेंगे तारे शाम का।
उस समय तक याद रखेगा जगत इस नाम को॥

सुग्रीव—निस्सन्देह महाराज ! धर्म ऐसी ही सतियों क सहारे ठहरा हुआ है।

राम—अच्छा हनुमान जी ? यह तो बतलाइये कि क्या उन्होंने अपनी कोई निशानी नहीं भेजी है।

हनुमान—भेजी है महाराज ! यह लीजिये उनको चूड़ामणि।

राम—(चूड़ामणि को छाती से लगाकर) आह चूड़ामणि ! तू प्यारी का सन्देश लेकर आई है इसलिये तेरो कान्ति मे स्वर्ग की शोभा समाई है।

इक वियोगी के लिये सन्तोष का साधन है तू।
प्राण का रक्षक है तू मुझ को ता सजावन है तू॥

जामवन्त—निस्सन्देह !

कौन द सकता है कोमत प्रेम के उग्हार की।
मिल गई प्रेमी से जो वस्तु बना वह प्यार का॥

राम—अच्छा हनुमान जी ! यदि जानका जा ने कोई सन्देश दिया हो तो वह भी सुनाओं।

हनुमान—हां महाराज ! उन्होंने कहा है कि आप तो दुखों के दूर करने वाले है फिर मेरा दुख दूर क्यों नहा करते ? आप ने तो दुष्टो के सहार करने का प्रण किया है फिर भूमि का भार क्यों नहीं हरते ? हे नाथ ! आप ने मुझ क्यों त्याग दिया है? क्या दीन रक्षक और भक्तवत्सल बन कर अपनी प्रतिज्ञा का यही पालन किया है।

राम—ठीक है ! और कुछ ?

हनुमान—और यह भी कहा है कि :—

इक महीना और मैं रक्षा करूंगो प्राण की ।
जो न आये फिर नहीं तुमको मिलेगी जानकी ।।

राम—मैं अवश्य जाऊंगा ! पर्वतों को चीर कर, सागरों को पार करके और काल को पीछे हटा कर मैं अवश्य जाऊंगा ।

जानकी के वास्ते बाजी लगेगी जान की ।
जानकी ही जब नहीं, परवाह फिर क्या जानकी ।।

हनुमान—महाराज ! यह तो मैं रावण को पहले ही बता आया हूं और चेतावनी के रूप में लंका भी जला आया हूं ।

राम—हैं ! लंका को जला आये हो ? यह किस प्रकार हुआ हनुमान जी !

हनुमान—हे नाथ ! जब आप के प्रताप से मैं समुद्र को लांघ कर लंका में पहुंचा तो माता जी के दर्शन पाये और फिर उनकी आज्ञा पाकर अशोक वाटिका के फल तोड़कर खाये । सूचना पाते ही रावण ने अपने पुत्र अक्षयकुमार को भेजा किन्तु वह मेरे हाथ से परलोक सिधारा । फिर रावण का बड़ा पुत्र मेघनाद आया और उसने मुझे नागफांस में फंसाया । इसके उपरान्त मैंने रावण का दर्शन पाया और उसे भली प्रकार समझाया । अन्त में उसने मेरी पूंछ में आग लगवा दी जिससे मैंने समस्त लंका जला दी ।

राम—निस्सन्देह हनुमान जी ! तुम बड़े पराक्रमी हो ! तुमने हमारा बड़ा उपकार किया है । अच्छा, तुम्हें जो अच्छा लगे सोई वर मांग लो !

हनुमान—नाथ ! जिस पर आपकी कृपा हो जाती है उसके लिये मांगने को और क्या रह जाता है ? फिर भी यदि आप देना ही चाहते हैं तो केवल इतना अनुग्रह कीजिये कि अपनी निर्मल भक्ति दीजिये ।

राम—एवमस्तु ! [आरती पर ड्राप]

दसवां अंक

दृश्य पहला

(रावण का दरबार)

रावण—अहा !:—

इन्द्र, यम, अग्नि, वरुण, दिग्पाल, दानव, चर अचर।
दास को सूरत खड़े रहते हैं मेरे द्वार पर॥

अग्नि का तेज, सागर की गम्भीरता और पवन की चाल-सब मेरे आधीन हैं, ब्रह्मा का ज्ञान, शंकर का तप और विष्णु का वैभव सब मेरे सामने शक्ति हीन है। मैं चाहूं तो लोकों का आकार मिटा दूं, दिशाओं को बदल कर दिग्पालों की जड़ें हिला दूं :—

ब्रह्माण्ड का बढ़ता हुआ विस्तार रोक दूं।
नौ दीप की चलती हुई सरकार रोक दूं॥
आकाश, चान्द, तारों, का व्यवहार रोक दूं।
मैं चाहूं तो जमाने की रफ्तार रोक दूं॥
अग्नि, वरुण, कुबेर का सरदार मैं ही हूं।
लोकों का लोकपाल हूं, दातार मैं ही हूं॥

मन्त्री—यथार्थ है, महाराज !

राजाओं, लोकपालों के सरदार आप हैं।
गन्धर्व, देव, दैत्य की सरकार आप हैं॥

सभासद—सत्य है श्रीमान् !

बस में किया है इन्द्र को, यम को मसल दिया।
जिसने उठाया सिर उसे फौरन कुचल दिया॥

रावण—अच्छा, अब आनन्दोत्सव मनाया जाये, अप्सराओं को बुला कर नाच-गाने का रंग जमाया जाये।

(अप्सराओं का आना और नाचना)

रावण—साकी ! जल्दी लाओ :—

ऐसी पिला दे साकीया दुनिया का गम न हो।
बढ़ता रहे सरूर भी मस्ती भी कम न हो ।।

मन्त्री—साकी ! याद रख :—

मुझ को तो ऐसी चाहिये मदहोश ही रहूं।
दुनिया की कुछ खबर न हो जन्नत में जा बसू ।।

मेघनाद—साकी ! ओ साकी :—

बाकी न छोड़ खुम में, बराबर लुटाये जा।
साकी तुझे कसम है पिये जा पिलाए जा ।।

रावण—हां-हां, ठीक बात है :—

जाम पर जाम पिला रंग जमा दे साकी।
जिसको आदत न हो उसको भी पिलादे साक़ी।।
एक, दो, तीन नहीं दौर चला दे साकी।
सारे दरबार को मदहोश बना दे साकी ।।

सभासद (१)—साकी ! हम को भी पिला :—

बाकी न रख उधार चुका दे सब आज ही।
कलकी किसे खबर है पिलादे सब आज ही ।।

सभासद (२)—

साकी तुझे कसम है जो तकरार तू करे।
इन्कार मैं करूं न ही इन्कार तू करे ।।

अप्सरा—गाना तर्ज—(छोटा सा बलमा मोरे आंगना में गिल्ली खेले)

बालम के साथ आली रात मैंने खेली होली।
भर के गुलाबी गुल रंग की पिचकारी खोली-

रंग की पिचकारी खोली;
भीगा बसन्ती मोरा चीर आली मसकी चोली
बालम के साथ.....
मीठी-मीठी बात मोरे साथ खेली आंख मचोली
साथ खेली आंख मचोली।
बिगड़ा सिंगार,टूटा हार,फिर भी मैं ना बोली।
बालम के साथ.....

द्वारपाल—(मस्तक नवाकर) महाराज की जय हो! एक गुप्तचर आया है और कोई आवश्यक सूचना लाया है।

रावण—अच्छा! आने दो।

गुप्तचर—(प्रणाम करके) महाराज की जय हो! वानर सेना समुद्र-तट पर आ पहुंची है।

रावण—क्या कहा? वानर सेना समुद्रतट पर?

गुप्तचर—हां महाराज! और वे लोग चढ़ाई करने की योजनाएं बना रहे हैं।

रावण—कोई चिंता नहीं! जाओ तुम आराम करो।

(दूत का जाना)

रावण—लंका के वीरो; तुमने सुना गुप्तचर क्या कहता है?

सब—हां महाराज! सुना और भली प्रकार सुना।

रावण—तो बताओ कि अब क्या होना चाहिये?

सब—लंका का बोल-बाला और शत्रुओं का मुंहकाला होना चाहिये।

मन्त्री—महाराज! आप काहे की चिन्ता करते हैं? ऐसे-ऐसे जन्तुओं से तो हमारे राक्षस नित पेट भरते हैं:—

हमारे वीर तो सुर और असुर को जीत कर आयें।
इशारा आपका पायें तो इक दम सब को खा जायें॥

सेनापति—ठीक तो है श्रीमान्:—

परवाह क्या है सैकड़ों हैं या हजार हैं।
वानर तो रात दिन का हमारा अहार हैं ॥

रावण—क्यों नहीं ? तुम जैसे वीरों पर ही तो लंका को गर्व है।

मेघनाद—पिता जी ! जिन भुजाओं की धाक समस्त ब्रह्मांड पर छा गई है, क्या उनमें अब निर्बलता आ गई है ?

है आन वीरता की और आप की कसम है।
नीचा करूंगा उनको जब तक कि दममें दम है॥

पहला सभासद—महाराज ! आप की आज्ञा पाते ही एक एक को यमपुर पहुंचा दूंगा !

दूसरा—और मैं पकड़-पकड़ कर समुद्र में डुबा दूंगा।

तीसरा—और मैं उनके सिर भिड़ा दूंगा।

विभीषण—भूल रहे हो भाई साहब ! इन स्वार्थी लोगों की बातों पर भूल रहे हो। याद रखो ! ये मीठी मीठी बातें बना कर आप को कुमार्ग पर ले जा रहे हैं; प्रसन्न करने के लिए असम्भव को सम्भव कर दिखा रहे हैं :—

स्वार्थ के बन्दे हैं ये करते हैं बातें चाल की।
राह पर ले जा रहे हैं आपको जंजाल की ॥
बचके चलिए कपट से धोखा न इनसे खाइये।
ज्ञानका पथ छोड़कर अज्ञान पर मत जाइये ॥

मन्त्री—देखिये महाराज ! हम तो स्वामीभक्ति की शपथ खा रहे हैं और विभीषण जी हमें स्वार्थी ठहरा रहे है।

विभीषण—चुप रहो ! इन बातों में जरा भी सच्चाई नहीं, कुमार्ग पर चलने में किसी को भलाई नहीं (रावण से) सोचिये भाई साहब ! जरा बुद्धि के पट खोल कर सोचिये ! जरा ज्ञान के पख पसार कर सोचिये :—

सर्प में अमृत कहां, पाषाण में गन्धक कहां।
कीच में खुशबू कहां और आग में ठण्डक कहां?
लाख कोशिश कीजिये बदसे बदी जाती नहीं।
दुष्ट लोगों में कभी नेकी को बू आती नहीं॥

रावण—विभीषण ! आज तुझे क्या हो गया है ? तेरा ज्ञान और वैराग्य कहाँ सो गया है ?

आज ही लंकेश से सूझी तुझे भी वैर की ?
मेरा भाई और भलाई कर रहा है गैर की ?

विभीषण—नहीं भ्राता जी ! मैं ठीक कह रहा हूं। यदि आप कल्याण चाहते हैं, यदि आपको भलाई की इच्छा है, यदि आप धोखे में पड़कर अपना अनहित करना नहीं चाहते तो इन स्वार्थी लोगों को अपना हितैषी न जानिये, शत्रु को मित्र कदापि न मानिये। क्रोध और अभिमान को छोड़कर अज्ञान और माया से मुंह मोड़कर भगवान की शरण में जाइये और जानकी को लौटाकर अमर पद पाइये। याद रखिये :—

कुबुद्धि क्रोध और माया नरक गामी बनाते हैं।
सचाई से हटाते हैं बुराई पर लगाते हैं॥
उन्हें समझो न तुम अपना कुपथ पर जो चलाते हैं।
समय पर काम आते हैं तो बस अपने ही आते हैं॥
बदी का बीज बोकर फल न कोई नेक पायेगा।
यदि आकाश पर थूका तो वह मुंह पर ही आयेगा॥॥

रावण—विभीषण ! शत्रु के पक्ष ने तुझे अन्धा बना दिया है; द्रोह की भावना ने तेरी आँखों पर चरबी फेरदी है। तू इतना भी नहीं देख सकता कि :—

स्वर्ग से पाताल तक पृथ्वी से ले आकाश तक;
बज रहा है मेरा डँका विंध्य से कैलाश तक;

विश्व घबराता है मुझसे किससे घबराता है तू ?
देव भय खाते हैं मेरा किसका भय खाता है तू ?

विभीषण—यही तो बात है भाई साहब ! इसी अभिमान के कारण तो आपको आगा-पीछा नहीं सूझता; इसी अहंकार ने तो आपको इतना अज्ञानी बना दिया; आपको शत्रु और मित्र की पहचान नहीं रही; हित के वचन आपको कड़वे लगने लगे। ज्ञान की बातें निरर्थक प्रतीत होने लगीं। भ्राता जी ! मैं एक बार फिर कहता हूं; मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूं कि अपनी हठ को जाने दीजिए; पुलस्त मुनि के कुल का नाश न कीजिये :—

जला जाता है दिल मेरा तुम्हारी इस ढिठाई से।
भला होगा नहीं कुल का, प्रभु की शत्रुताई से॥
जो मन में भाव था मेरे कहा बिल्कुल सफाई से।
बुरा हो लाख जन्मों तक कपट रक्खूं जो भाई से॥

रावण—चुप मूर्ख ! तूने यह उलटा उपदेश कहां से पाया ? मैंने तुझे लाख बार समझाया कि कायरता में रावण के कुल का नाम नहीं किसी भी शक्ति से भय खाना हमारा काम नहीं। किन्तु एक तू है कि कुछ भी नहीं समझता है; बार-बार वही राम की बड़ाई की बकवास बकता है—

विश्व में बदनाम मैं तेरी जबां से हो गया,
शर्म कर निलज्ज तू कायर कहां से हो गया?

विभीषण—कायर मैं नहीं भाई साहब, कायर वे हैं जो आप को उल्टी मत देते हैं जो झूठी और कपट भरी बातें बनाकर आपसे स्वामी-भक्ति का इनाम लेते हैं।

रावण—यह तू कैसे कहता है ?

विभीषण—मैं इसलिये कहता हूं कि :—

गरजने वाले बादल तो बहुत कम ही बरसते हैं;
वे सब सोना नहीं होते पदारथ जो चमकते हैं।

अधर्मी, स्वार्थी, झूठे, कपट करते नहीं डरते;
जो करते हैं नहीं कहते, जो कहते हैं नहीं करते।

मेघनाद—बस रहने दीजिए चचा साहब ! बहुत सुन चुका हूं। आप को इतनी भी लाज नहीं कि भाई होकर भाई से विश्वासघात करते हो; हमारा नमक खाते हो और शत्रु के पक्ष की बात करते हो।

विभीषण—देखते हो भ्राता जी ! यह छोकरा क्या कह रहा है ?

रावण—जो कुछ कह रहा है ठीक कह रहा है। तुम्हारी बातों में हमें सन्देह नजर आता है। तुम्हारा द्रोह हमारे पक्ष को निर्बल बनाता है :—

काटता है तब ही लोहा काठ को निज धार से।
जबकि मिल जाती है लकड़ी लोहे के औजार से॥

विभीषण—बड़ा आश्चर्य है भ्राता जी ! कि आप भी मुझ पर सन्देह करते हैं, क्या गीले और सूखे सब एक साथ जलते हैं।

रावण—क्यों नहीं जलते ! जब द्रोह की अग्नि भड़कती है तो सूखे और गीले सब को जला देता है; विद्रोह की भावना मनुष्य को अन्धा बना देती है।

विभीषण—ठीक है ! जिस प्रकार लोहे में घुन और पत्थर में दीमक नहीं लगती, उसी प्रकार अभिमानी पर हित की बात कोई असर नहीं करती। आप क्रोध में आपे से बाहर हो रहे हैं, बदले की भावना से दब कर अच्छे और बुरे का ज्ञान खो रहे हैं :—

सोच कर देखो, गले नागन को लिपटाते हो तुम;
कूदते हो आग में, पर्वत से टकराते हो तुम।

रावण—डरपोक ! कमीने ! निर्लज्ज ! तू स्वय कायर होकर मुझे

भी कायर बनाता है। उन वन वासियों की बार-बार बड़ाई करके रावण को डराना चाहता है। जानता नहीं :—

स्वग और पाताल का पल्ला मिला देते हैं हम;
पैर की ठोकर से ही भौंचाल ला देते हैं हम;
क्रोध की अग्नि से सागर को सुखा देते हैं हम;
पर्वतों को फूंक से पानी बना देते हैं हम;
वज्र का है दिल हमारा मोम और शीशा नहीं;
हम ने भय खाना किसी से आज तक सीखा नहीं।

विभीषण—इसीलिए तो मैं भी कहता हूं भाई साहब ! कि इस शक्ति और वैभव को मिट्टी में न मिलाइये, ऐसे ऐश्वर्य और उन्नति को नाश के गढ्ढे में न गिराइये :—

मारिये ठोकर न अपने आप ऐसी शान को;
नाम को,धन को,विभव को,मान को,सम्मान को;
जिस का देखा इस तरह प्रकाश अपनी आंख से;
किस तरह देखूंगा उसका नाश अपनी आंख से।

रावण—बस-बस ! ओ धूर्त ! मुझे तेरे उपदेश की आवश्यकता नहीं, तेरी शिक्षा सुनने का अवकाश नहीं। इस बेसुरी तान को बन्द कर, इस बे समय की भैरवी को रहने दे :—

बैठ कर तुझ से सुनें हम गैर के गुणगान को।
इस तरह की है नहीं आदत हमारे कान को॥

मेघनाद—पिता जी ! मालूम होता है कि चचा साहब शत्रु से घूस खा गये हैं, जो ऐसी कमीनी बातों पर आ गये हैं।

रावण—सम्भव है ऐसा न हो !

विभीषण—आप कुछ भी कहें भाई, परन्तु मैं एक बार फिर कहता हूं कि आप अपने किये पर पछताओगे; मेरी बातों को याद करके पश्चाताप के आँसू बहाओगे। राम से वैर करने में किसी को

भलाई नहीं; अपने पैरों पर आप कुल्हाड़ी मारना कोई दानाई नहीं :—

अक्ल से सोचो जरा बुद्धि से अपनी काम लो।
दिल चला है पाप के रस्ते पै इस को थाम लो॥

रावण—फिर वही कायरता की बात। फिर वही शत्रुओं की बड़ाई! अरे अज्ञानी! विश्वासघातो! कुलनाशक कुत्ते!

अब उतर आया है ऐसी नीचता के काम पर।
थू है तेरी कीर्ति पर, थू है तेरे नाम पर॥
डूब मर जाकर कहीं, बदली है क्या हालत तेरी।
चल निकल, जा दूर ही, भाती नहीं सूरत तेरी॥

[लात मारना]

विभीषण—अच्छा भाई! खुश रहो :—

मुझ को आखिर क्या पड़ी जो कुछ किया सो पाओगे।
बीज जो बोया है तुमने फल भी उस का खाओगे॥

[विभीषण का जाना]

मन्त्री—महाराज! अब विभीषण सीधा शत्रुओं के पास जायगा और उनको हमारा सारा भेद बतलायेगा।

रावण—कोई परवाह नहीं, वीर ऐसी बातों से कब डरते हैं? शेर तो चोट खाकर और भी बफरते हैं।

मेघनाद—यथार्थ है पिता जी! हम किसी भी आपत्ति से मुंह मोड़ने वाले नहीं; यदि सारा संसार भी रूस जाय तो भी हम साहस छोड़ने वाले नहीं।

रावण—शाबाश तुम रावण के सच्चे सपूत हो।

[सब का जाना, परदा गिरना]

दृश्य दूसरा

(समुद्र-तट)

[राम के शिवर का बाहरी दृश्य-वानर पहरा दे रहे हैं विभीषण आता है।]

विभीषण—(स्वयं) अहा ! मैं कितना भाग्यशाली हूं ! आज भगवान के उन कमलरूपी चरणों के दर्शन करूंगा जिनको रज ने गौतम की नार अहिल्या को पार कर दिया; जिन्होंने बड़े-बड़े पातकी जीवों का उद्धार कर दिया :—

शिव के मन-मन्दिर में जिन चरणों का निशदिन वास है।
जग को जिन का है सहारा भक्तजन को आस है॥
उन की रज पाकर मैं लोकों का धनी बन जाऊंगा।
आज इक पत्थर से पारस की मणी बन जाऊंगा॥

एक वानर—(विभीषण को देख कर) अरे देखो तो ! हमारे दल में यह कौन घूम रहा है चाल ढाल से तो राक्षस मालूम होता है। परन्तु मस्तक पर तिलक लगाये, गले में माला पहने और राम-राम रटते हुए हरिभक्त सा लगता है ! —

दूसरा—अरे कहीं ऐसा न हो कि रावण का कोई गुप्तचर हमारा भेद लेने आया हो और हमें धोखा देने के लिये यह कपट रूप बनाया हो !

तीसरा—तो चलो इससे बातें करें और यदि तुम्हारा अनुमान ठीक हो तो पकड़ कर प्रभु के पास ले चलें।

पहला—अरे भाई ! तुम कौन हो ? जो निडर होकर रामदल में घूम रहे हो !

विभीषण—जय ! रघुकुल भूषण भगवान राम की जय ! भाई तुम लोग बड़े भाग्यशाली हो जो भगवान की सेवा में जीवन बिता रहे हो, अपने जन्म का सार्थक बना रहे हो !

दूसरा—अरे ! ये चिकनी-चुपड़ी बातें न बना, पहले अपना सब हाल सच-सच बता !

विभीषण—भाई ! मैं रावण का अनुज विभीषण जन्म से राक्षस हूं ।

दूसरा—देख लो ! मैंने कहा न था कि यह अवश्य कोई राक्षस है और हमारा भेद लेने आया है ।

तीसरा—तो फिर देखते क्या हो । इसे बांध लो और प्रभु के पास ले चलो ।

सुग्रीव—(आकर) अरे यह क्या झगड़ा है ? क्यों इतना ऊधम मचा रखा है ?

तीसरा—महाराज, यह गुप्तचर पकड़ा है जो लंका से हमारा भेद लेने आया है !

विभीषण—नहीं महाराज ! मैं रावण का भाई तो अवश्य हूं किन्तु भेद लेने के लिये नहीं; भगवान की शरण लेने के लिय आया हूं ।

सुग्रीव—भगवान मे तुम्हारी भेंट नहीं हो सकती ! हम शत्रु के किसी आदमी को अपना विश्वास पात्र नहीं बनाएंगे ।

विभीषण—तो कृपा करके प्रभु को यह समाचार सुना दीजिये । यदि वे मुझे आश्रय देना न चाहेंगे तो मैं चला जाऊंगा ।

सुग्रीव—अच्छा ! तुम यहीं ठहरो ! मैं अभी आता हूं ।

विभीषण—जैसी आज्ञा !

सुग्रीव—(राम के पास आकर) महाराज ! रावण का भाई विभीषण आप से मिलना चाहता है ।

राम—तो इस विषय में आपकी क्या सम्मति है ?

सुग्रीव—महाराज ! यद्यपि शीलस्वभाव है परन्तु फिर भी राक्षस है ! निशाचरों की माया कुछ समझ में नहीं आती सम्भव है

इसमें भी कोई कपट हो। इस लिये मेरी सम्मति में उसे बांध रख छोड़ना चाहिये।

जामवन्त—हां, शत्रु पर विश्वास करने में कोई चतुराई नहीं।

राम—जामवन्त जी! मैं आपके वचनों का तो आदर करता हूं परन्तु अपनी प्रतिज्ञा तोड़ते हुए डरता हूं। यदि कोई ब्रह्महत्या करके भी मेरी शरण में आएगा तो आश्रय अवश्य पायगा!

हनुमान—धन्य है प्रभु! आपकी प्रतिज्ञा धन्य है!:—

मित्र हो, शत्रु हो इस की कुछ नहीं पहचान है।
जो शरण में आ गया उस का ही बस कल्याण है॥

राम—जाइये, जाइये हनुमान जी। विभीषण को आदर सहित ले आइये!

हनुमान—जैसी आज्ञा प्रभु! (जाना)

सुग्रीव—महाराज, क्या रावण का भाई निष्कपट हो सकता है?

राम—क्यों नहीं, सुग्रीव जी! क्या कीच में कमल नहीं फूलता? क्या सीप से मोती नहीं निकलता? क्या कांटों में फूल नहीं खिलता? जब हिरणाकुश के घर प्रहलाद हो सकता है तो पुलिस्त मुनि के वश से विभीषण का पैदा होना क्या आश्चर्य है?

सुग्रीव—धन्य है महाराज! मेरा सारा भ्रम दूर हो गया, मन का सन्देह चकनाचूर हो गया!

[हनुमान का विभीषण सहित आना]

विभीषण—(हाथ जोड़ कर) शरण! हे नाथ शरण! (पैरों में गिरना)

राम—(खड़े होकर और विभीषण को गले लगाकर) भक्त शिरोमणि विभीषण! तुम इतना क्यों घबरा रहे हो? आखिर किस भय के कारण सटपटा रहे हो?

विभीषण—कुछ न पूछो भगवन् ! मैंने निशाचर कुल में जन्म लिया है; रावण का भाई हूं ! राक्षसी स्वभाव के कारण मुझे पाप प्यारा है; मैंने कोई शुभ कार्य भी नहीं किया किन्तु नाथ ! आप संसार के दुःख दूर करने वाले हैं, शरणागत की रक्षा करना आपकी प्रतिज्ञा है; यही सब सुनकर मैं आपकी शरण में आया हूं। आप मेरा उद्धार कीजिये, मुझे अपनी सेवा में लीजिये ।

राम—विभीषण जी ! तुम निश्चिन्त रहो, परन्तु यह तो कहो कि परिवार से क्यों मुंह मोड़ा? भाई का साथ किस लिये छोड़ा?

विभीषण—हे नाथ ! नरक का वास अच्छा है परन्तु दुष्ट का पास अच्छा नहीं ! जो कुरीति पर चलने वाला है जिसको दुराचार और व्यभिचार ही प्यारा है; जो धर्म को भूल कर अधर्म के मार्ग पर जा रहा है उससे पृथक रहने में ही जीव की भलाई है ?

राम—क्या तुम्हारा मतलब रावण से है ?

विभीषण—हां महाराज ! मैंने उसे अनेक प्रकार से समझाया, ऊंच नीच दिखाकर सत्य मार्ग पर लाना चाहा परन्तु उसके नाश के दिन समीप आ रहे हैं इसलिये उसे अनाचार ही भा रहे हैं।

राम—ठीक कहते हो विभीषण ! तुम ने लोभ, मोह, अभिमान आदि सभी विकारों को जीत लिया है, तुम अनाचार से बचकर सत्यमार्ग पर चलने वाले हो। तुम्हें किस का भय है ?

विभीषण—हे नाथ ! जिस पर आपकी कृपा हो जाती है उसे त्रिलोक में डराने वाला कौन है ? जिस दीपक को आप जलाते हैं उसे बुझाने वाला कौन है ?

राम—विभीषण ! जब तुम माता पिता, भाई-बहिन, स्त्री-पुत्र और घर-बार का त्याग करके हमारी शरण में आ गये तो तुम्हें

कोई संकट न सतायगा, यदि समस्त ब्रह्मॉड भी तुम्हारा शत्रु बन जाय तो भी तुम्हारा बाल बांका न हो पायेगा।

सब—जय ! कौशलाधीश महाराज रामचन्द्र की जय ! त्रिलोकिनाथ भगवान राम की जय !

राम—अच्छा लंकेश ! अब तुम्हें जो अच्छा लगे वही वर मांग लो।

विभीषण—क्या कहते हो नाथ ! लंकेश कह कर मुझे क्यों लज्जित करते हो ?

राम—लज्जित नहीं, हम ठीक कहते हैं और आज से तुम्हें लंका का राजा बनाते हैं।

विभीषण—नहीं महाराज ! आप के चरणों की भक्ति को छोड़ और मुझे किसी चीज की इच्छा नहीं।

राम—यह हम जानते हैं ! परन्तु लंका का राज्य हम तुम्हारी इच्छा से नहीं, अपनी इच्छा से देते हैं।

[राजतिलक करना]

हनुमान—धन्य हो महाराज ! जो सम्पदा महादेव जी ने रावण को दस शीश का बलिदान करने पर दी थी वह आप ने विभीषण को केवल शरण आने पर दे दी।

राम—हनुमान जी ! भक्त को हम क्या दे सकते हैं ? भक्त के ऋण से तो हम कभी भी उऋण नहीं हो सकते।

सब—बोलो कृपानिधान भगवान राम की जय !

राम—अच्छा सुग्रीव जी ! अब यह विचारना चाहिये कि यह अथाह सागर किस प्रकार पार उतरा जायगा !

सुग्रीव—महाराज ! इस भयंकर सागर को पार करना तो बड़ा ही दुर्लभ प्रतीत होता है।

विभीषण—नहीं महाराज ! आपके सामने कोई काम दुर्लभ नहीं। आपकी दृष्टि पड़ते ही पर्वत मार्ग छोड़ सकते हैं आपके बाण

समुद्र—हे नाथ ! आपका क्रोध प्रलय के समान होता है, आप का एक ही वाण अनेकों ब्रह्माण्ड का नाश कर सकता है, फिर मैं दीन बेचारा किस गिनती में हूं। मुझे अपना दास समझ कर क्षमा कीजिये और इस भयकर वाण से अभयदान दीजिये ?

राम—अच्छा ! हम तुम्हारी नम्रता पर प्रसन्न हुए, परन्तु अब ऐसा उपाय बतलाओ जिससे हमारी सेना पार हो जाए ?

समुद्र—सुनिये महाराज ? किसी नदी के किनारे एक क्षमाशील मुनि रहते थे और ये नल-नील दोनों भाई वहां उपद्रव किया करते थे। जिस समय वे मुनि आंखें बन्द करके ध्यान में बैठते उसी समय ये उनके ठाकुर जी को उठा लाते और समुद्र में बहा देते। एक दिन मुनि ने क्रोधित होकर यह शाप दिया कि तुम समुद्र में जो वस्तु डालोगे वह उपर ही तैरेगी और उसी स्थान पर स्थिर रहेगी। इसलिये नाथ आज्ञा दीजिये कि सब वानर बड़े-बड़ पत्थर उठाकर लायें और नल-नील उन्हें अपने हाथों से समुद्र में डालते जाएं। इस प्रकार पुल तैयार हो जाएगा। और सेना को पार होने का मार्ग मिल जाएगा।

राम—हां उपाय तो ठीक है; किन्तु धनुष पर आया हुआ बाण भी तो खाली नहीं जायगा; यह किसी न किसी को अवश्य निशाना बनायगा।

समुद्र—अच्छा महाराज ! यदि ऐसा ही है तो इस बाण को पाश्चम दिशा में छोड़ दीजिये और उस ओर जो हिंसक राक्षस रहते हैं इससे उनका संहार कीजिये !

राम—अच्छा लो ! उसी दिशा में छोड़ता हूं ! (छोड़ना)

समुद्र—जय ! भक्तवत्सल भगवान की जय ! (जाना)

राम अच्छा नल-नील जी ! अब तुम वानरों सहित चले जाओ और जितनी जल्दी हो सके पुल बनाओ !

नल-नील—जैसी आज्ञा प्रभो ! (जाना)

राम—सुग्रीव जी ! यह भूमि बड़ी रमणीक है, समुद्र-तट होने के कारण स्थान भी पवित्र है। हम यहां शिव मन्दिर की स्थापना करेंगे और महादेव का पूजन करके लंका पर चढ़ेंगे !

सुग्रीव—महाराज ! आपका विचार बड़ा पवित्र है। मैं इसका सब प्रबन्ध किये देता हूं।

[सुग्रीव का जाना दृश्य परिवर्तन पर रामेश्वरम् की स्थापना परदा गिरना]

दृश्य तीसरा

(समुद्र-तट पर रामेश्वरम् का दृश्य)

[राम, लक्ष्मण, हनुमान, सुग्रीव आदि शिव पूजा कर रहे हैं]

शिव-वन्दना

जय जय शिव शम्भू त्रिपुरारी-विपत-विदारन मंङ्गलकारी।
आशुतोष भगवन सुखदायक-जय जय उमापति गणनायक॥
सुर-नर पालक जन रखवारे-यम फांसी प्रभु काटन हारे।
सन्त-मुनि-मन रंजन स्वामी-घट-घट-वासी अन्तर्यामी॥
शिव शंकर योगेश्वर त्यागी—नाम लेत भव-बाधा भागी।
जाके मन-मन्दिर शिव-त्रासा-ताको नहिं सपनेहु भव त्रासा॥
बारम्बार नवावहुं सीसा-देहु नाथ पुनि-पुनि आसीसा।
दानव—दनुज सकल जग दाहू-करहूं नाश दीजे बल बाहू॥

सब—जय जय ! भोलेनाथ की जय ! रामेश्वर महाराज की जय !

राम—सुग्रीव जी ! शिव की कृपा के बिना जीव का निस्तारा नहीं, महादेव के समान मुझ और कोई प्यारा नहीं। शिव का द्रोही यदि मेरा भक्त कहाता है तो वह सपने में भी मुझे नहीं पाता है। जो मनुष्य रामेश्वरम् के दर्शन करके शिवभक्ति का वर-दान पायेंगे वे बिना परिश्रम ही भव-सागर तर जाएंगे, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं।

नल-नील—(आकर और प्रणाम करके) महाराज ! सेतु तैयार हो गया। अब आज्ञा दीजिये और सेना के पार होने का प्रबन्ध कीजिये!

राम—धन्य है ! नल-नील जी ! आप लोगों को धन्य है। अच्छा सुग्रीव जी ! चलो और पार होने का प्रबन्ध करो।

सुग्रीव—जैसी आज्ञा महाराज !

[जाना, परदा गिरना]

दृश्य चौथा

(सेतुबन्द रामेश्वरम् के दर्शन)

[सेतु की आरती करके समस्त सेना का पार होना और लंका के तट पर पहुँचना तथा पड़ाव डालना]

सुग्रीव—महाराज ! अब सारी सेना पार हो चुकी है आगे के विषय में क्या विचार है ?

राम—मेरी सम्मति में एक बार फिर किसी दूत को भेजकर रावण को समझाना चाहिये और जहां तक हो सके आगामी झगड़ को टालना चाहिये।

हनुमान—यथार्थ है महाराज ! मेरी सम्मति में भी रावण को एक अवसर और देना चाहिये और उसको समझाने के लिये युवराज अंगद को भेजना चाहिये।

राम—हां ! हमारा विचार भी ऐसा-ही है। अंगद युवक, निपुण तथा सबल भी है; और वीर होने के साथ-साथ नीति-कुशल भी है।

अंगद—(राम से) तो नाथ ! मुझे आशीर्वाद दीजिये और अभिमानी से भेंट करने के लिये विदा कीजिये !

राम—हां, वत्स जाओ, मेरा आशीर्वाद है कि तुम संसार में अमर कीर्ति पाओ !

अंगद—अच्छा प्रभो ! :—

चिन्ता ही क्या है आप का सिर पर जो हाथ है;
देखूंगा जाके उस को जो देवों का नाथ है।

[जाना, परदा गिरना]

दृश्य पांचवां

(परदा-रास्ता)

[रावण का चलते हुए दिखाई देना]

रावण—(स्वेय) क्या राम ने सचमुच समुद्र पर पुल बांध लिया ? क्या वास्तव में वानर सेना पार उतर आई ? क्या मनुष्य के लिये इतना विशाल पुल बना लेना सम्भव है ? (रुक कर) जलनिधि, नीरनिधि, पयोधि, वारीश, नदीश ! (चौंकना होकर) हैं ! क्या कह गया ? आज अचानक दसों शीश का स्मरण क्यों हो आया आज मेरे सारे मुख एक साथ क्यों बोलने लगे ? यह उलटी गति किसलिये होने लगी? (सोचकर)हां याद आया। ब्रह्मा जो ने कहा था कि जब तू दसों मुख से एक साथ बोलेगा तब तेरा अन्तिम समय आयेगा और भूमण्डल से निशाचरों का नाश हो जायेगा ! ओह ! विधाता ! क्या तूने यही लिखा था ? :—

जीत कर लोकों अलोकों को, सकल संसार को।
दासता में ला के दानव-देव की सरकार को॥
अपने चरणों में झुकाकर स्वर्ग को आकाश को।
हाथ से मानव के मैं पहुंचूंगा अपने नाश का॥

[सिर झुकाकर विचारों में डूब जाना]

दूत—(आकर और प्रणाम करके) महाराज की जय हो ! रामादल सुबेल पर्वत तक आ पहुचा है !

रावण—(सिर ऊपर उठाकर) क्या कहा ! सुबेल पर्वत तक ?

दूत—हां महाराज !

रावण—खैर कोई बात नहीं ! तुम जाओ (दूत का जाना) दूत कहता है कि राम सुबेल पर्वत पर आ गये ! निस्संदेह वे बड़े पराक्रमी हैं ! उन्होंने असम्भव को सम्भव कर दिखाया है। वे अवश्य विष्णु का अवतार हैं, उनमें ब्रह्म की शक्ति विद्यमान है; वे अवश्य निशाचरों का नाश करेंगे (सोचकर) कुशध्वज ऋषि की कन्या को जब मैंने कामातुर होकर सताया था तो उसने कहा था कि मैं काल का रूप बनकर आऊंगी और तेरा वश संसार से मिटाऊंगी ! क्या जानकी उसी का रूप है ? क्या उसके शब्दों के पूरा होने का समय आ गया है ? ओह ! अब मेरे सारे पाप इकट्ठे हो गये, अब मुझ कुकर्मों ने चारों ओर से घेर लिया। निस्संदेह !

बने हैं पाप से पापी बुरा मद से ही होता है।
कलंकित जीव दुनियां में सदा मद से ही होता है॥
किसी के नाश होने का समय जब निकट आता है।
तो उस अन्धे को दुनियां में सदा ही पाप भाता है॥

(फिर सोचकर और हंसकर) हैं ! लंकेश रावण और इतनी अधीरता ? देवताओं को पराजित करने वाला योद्धा और ऐसी घबराहट ! भय और मेरे दिल में ? कायरता और मेरे हृदय में नहा-नहीं ? कुछ आत्मा की असावधानी थी जो जाती रही ? कुछ विचारों की खलबली थी जो समाप्त हो गई ? मैं त्रिलोकी में किसी से डरने वाला नहीं, मेरा साहस किसी संकट में भी बिछड़ने वाला नहीं ? ऐसी-ऐसी समस्याएं तो नित्यप्रति आया करती हैं। ऐसे-ऐसे ध्यान तो कभी-कभी हो ही जाया करते हैं :—

जल, पवन की चाल से पर्वत हिला करते नहीं।
मच्छरों की फूंक से हाथी उड़ा करते नहीं॥

गीदड़ों की हूक से केहरी डरा करते नहीं।
मक्खों के सामने योद्धा झुका करते नहीं॥
जिस से दुनियां कांपता है स्वर्ग भी भयभीत है।
वह ही डर जाये किसी से शोक है अनुरीत है॥

अच्छा चलूं, अब जरा महल में चलकर इस विषय पर और विचार करूं।

[जाना, परदा गिरना]

दृश्य छठा

(मन्दोदरी का महल)

मन्दोदरी—(स्वगं) दासी कहती है कि वानर सेना ने सेतु बांध लिया है और रामादल समुद्र पार आ पहुंचा है। आह? अब क्या होगा क्या निशाचार मारे ही जाएंगे? क्या पतिदेव अपने अहंकार का फल अवश्य ही पायेंगे। ठीक है :—

कूदकर अग्नि में बच जाने का फिर साधन कहां?
विष पिये कोई तो फिर उस मूर्ख का जीवन कहां?
जो चलेगा धार पर तेगों को बच सकता नहीं।
राम के बैरी की तीनों लोक में रक्षा नहीं॥

रावण—(आकर) प्रिय! अब युद्ध आरम्भ होने वाला है, अब तो मिलना भी दुर्लभ हो जायगा।

मन्दोदरी—हां सुना है नाथ, कि रामादल सुबेल पर्वत पर आन पहुंचा है। हे स्वामी! मेरी विनती अब भी स्वीकार कर लीजिये! भगवान की शरण में जाकर जानकी को लौटा दीजिये :—

पराया धन है पत्थर सम, पराई नार माना है।
यही नीति भी कहती है यही अनुभव बताता है॥

रावण—प्रिय ! तुम जितना पति-प्रेम को जानती हो उतना राज-नीति को नहीं जानती ?

मन्दोदरी—तो आप ही समझा दीजिये :—

कहां की वीरता होगी कहां का नाम पाओगे ।
कहां तक मान फेलेगा जो अबला को सताओगे।।

रावण—ओह ! तुम कैसी अधीर हो गई ! :—

काम लो हिम्मत से प्यारी ! बेखतर, बेडर बनो ।
वीर की अर्धांगिनी होकर न तुम कायर बनो ।।

मन्दोदरी—हे नाथ ! मैं कायर नहीं हूं । परन्तु बैर उसी से अच्छा होता है जिसको अपने बल से जीता जा सके । राम में और आप में तो सूर्य और जुगनू का अन्तर है :—

तोड़ते हो नभ के तारों को समझकर फूल क्यों ।
डालते हो चन्द्रमा के मुख पै स्वामी धूल क्यों ।।
सांस की गरमी से भी फौलाद गलता है कभी ?
हाथ में सूरज छिपाने से भी छिपता है कभी ।।

रावण—(हंसकर) प्रिय ! तुम वृथा ही भय खा रही हो, अपने मन को व्यर्थ ही अधीर बना रही हो ? भला मेरे समान कौन सा योद्धा है; मैंने तो अपनी शक्ति से इन्द्र, वरुण, कुबेर और यम को भी जीता है :—

नभ का, भूमि, स्वर्ग को पाताल कर सकता हूं मैं ।
लोक और परलोक को पामाल कर सकता हूं मैं ।।
मैं अगर चाहूं तो भूमण्डल पलट कर छोड़ दूं ।
मार कर ठोकर महा पवन का सीना तोड़ दूं ।।

मन्दोदरी—ठीक है ! परन्तु आप को ब्रह्मा जी का शाप भी याद है?

रावण—शाप ! ब्रह्मा का शाप ! :—

शक्तियां आजाएं सारे विश्व की मिलकर अगर ।
देव, दानव, यक्ष और दिग्पाल सब बदलें नजर ।।

सामने आजाय जो यमराज भी खम ठोक कर।
घिर के आ जाएं घटाएं संकटों की शोश पर॥
तो भी दिल मेरा किसी का खोफ खा सकता नहीं।
शाप ब्रह्मा का भी रावण को डरा सकता नहीं॥

मन्दोदरी—महाराज! जब बुरी घड़ी आती है तो अनुकूल दशा भी प्रतिकूल हो जाती है :—

भाग्य के आधीन हैं सब देव भी अवतार भी।
वक्त के फिरते ही फिर जाता है कुल संसार भी।

रावण—कुछ भी हो परन्तु इस प्रकार की बातों को मैं निराधार मानता हूं; भाग्य के आधीन रहने वालों की मानसिक दुर्बलता को अच्छी तरह जानता हूं :—

दोष देते हैं विधाता को, जो साहस हीन हैं।
कर्म मे डरने ही वाले भाग्य के आधीन हैं॥
चक्र को संसार के उलटा घुमा सकते हैं हम।
देखना उलटी हुई किस्मत बना सकते है हम॥

मन्दोदरी—क्या बताऊं नाथ! जब से रामादल समुद्र पार आया है मेरी दाहिनी आंख बराबर फड़का करती है, हृदय बार-बार घबराता और छाती निरन्तर धड़का करती है। रातों को डरावने सपने दिखाई देते हैं, दिन में सियार और कुत्ते भौंकते सुनाई देते हैं। हे स्वामी :—

अब शगुन अच्छे नहीं हैं बात मेरी मानिये।
छोड़िये हट राम से संग्राम की मत ठानिये॥

रावण—तुम स्त्री स्वभाव से विवश हो, इसलिये तुम्हारा कोई दोष नहीं; परन्तु क्या मेरी शक्ति और वैभव को देखकर भी तुम्हें सन्तोष नहीं :—

अपशगुन के जाल में फंसकर मरी जाती हो क्यों।
वीरबाला होके तुम इतनी डरी जाती हो क्यों॥

देखना अशगुन शगुन सब मूर्खों की बात है।
कोई कर सकता है क्या जब तक कि साहस साथ है।।

मन्दोदरी—ठीक है नाथ ! मैं आपके साहस और पुरुषार्थ को भली प्रकार जानती हूं, जो कुछ आपने कहा सब कुछ सत्य मानती हूं, परन्तु पराई स्त्री को हर कर भी तो अपयश न कमाना चाहिये, निर्दोष को···—

रावण—(बात काट कर) खैर कोई बात नहीं; मैं इस विषय पर विचार कर लूगा। तुम जाओ आराम करो, मैं भी दरबार जाता हूं !

[रावण का जाना, परदा गिरना]

दृश्य सातवां

(रावण—दरबार)

रावण—अग्नि का तेज, पवन की चाल और सूर्य का प्रकाश आज सब मद्धम पड़ गये। मेरे क्रोध की आंधी आते ही बड़े-बड़े अभिमानियों के पांव उखड़ गये :—

रुक गये बहते हुए सागर मेरी रफतार से।
गर्जना है मौन बादल को मेरी हुंकार से।।
नाम से आकाश का चक्कर भी थम कर रह गया।
देखकर मेरी नजर कैलाश जम कर रह गया।।

मन्त्री—यथार्थ है महाराज !

रावण—पियो पिलाओ, खुशियां मनाओ ! गाओ बजाओ, रंग जमाओ।

मन्त्री—जैसी आज्ञा श्रीमान् !

[अप्सराओं का आना और नाच]

रावण—साकी ! :—

उड़ती हुई मस्ती तेरे पैमाने से निकले।
वह लालपरी नाचती मैखाने से निकले।।

मन्त्री—ठीक है ! बिल्कुल ठीक है ! :—

पीना पिलाना साकिया कुछ काम आयगा ।
दुनिया में जो लुटाएगा जन्नत में पाएगा ।।

मेघनाद—साकी ! :—

छा गई काली घटा चलने लगी ठण्डी हवा ।
अब तो दे साकी कि अब पीने का मौसम आ गया ।।

सभासद (१)—दौलत किसी को ऐश का सामान चाहिये ।
हम को तो साकिया तेरा पैमान चाहिये ।।

सभासद (२)—दौलत पै मर रहा हूं न आराम के लिये ।
दुनिया को छोड़ बैठा हूं इक जाम के लिये ।।

सभासद (३)—गुलजार पीने वालों से वीराना हो गया ।
जन्नत वहीं बनी जहां मैखाना हो गया ।।

अप्सराओं का गाना

जब प्रीत की रीत नहीं देखी फिर प्रीत लगाना क्या जानूं !
इस छोटी उमरिया में बालम मैं दिल का लगाना क्या जानूं ?
अबरू की कमानें कैसी हैं, ये तीरे नजर क्या होते है ?
जब खेल में बीते दिन मेरे, फिर तीर चलाना क्या जानूं ?
जुल्फें कैसे जंजीर बनी गेसू में दिल क्यों फंसते हैं ?
खेला न पिया आखेट कभी मैं दिल का फसाना क्या जानूं ?
क्यों दिन में चैन नहीं पड़ता क्यों रातों नींद नहीं आती ?
दिन खेली रातों सोई हूं मैं जगना जगाना क्या जानूं ?
यह टीस कुशल क्यो होती है दिल क्यों घबराया करता है ?
तुम कहते हो मैं सुनती हूं, पर दिल का फसाना क्या जानूं ।।

रावण—लंका के वीरो ! आप लोगों को ज्ञात ही है कि उन तपस्वियों ने समुद्र का पुल बांध लिया है और अपनी सेना को इस पार उतार लिया है । अब सोचना यह है कि युद्ध की व्यवस्था किस प्रकार की जाय ?

सेनापति—महाराज ! वानरी सेना तो हमारा भोजन है, उनको परास्त करना कौन सा कठिन है ।

मन्त्री—ठीक तो है, यदि आप आज्ञा दें तो सब को पकड़ कर आपके सामने ले आयें या मूली और गाजर का तरह चबा जाए ।

सभासद—महाराज! केवल हमें आज्ञा दे दीजिये और सबका विध्वन्स समझ लीजिये ।

प्रहस्त—अरे कायरो ! जिस समय अकेले वानर ने सारे नगर को जलाया था उस समय उसे क्यों न भोजन बनाया ? जिस समय राम के बाण ने मामा मारीच को यम के द्वार पहुंचाया था उस समय उसे क्यों न बचाया ?:

बड़ाई हाँकते हो बल को अपने बैठ कर घर पर ।
न रोका किसलिये उनको बनाया पुल जो सागर पर ॥
किया चौपट नगर का वीर सागर में डबोये थे ।
जलाया जब कि लंका को कहां तुम जा के सोये थे ॥

रावण—प्रहस्त ! जो कुछ कहना है साफ साफ कहो !

प्रहस्त—पिता जी ! दरबारी लोग आपके क्रोध से डरते हैं इसीलिये आपके मुंह पर आपकी बड़ाई करते हैं। याद रखिये कपटी लोग मन में कपट रख कर मीठी मीठी बातें बनाया करते हैं परन्तु जब समय आता है तो मुंह छिपाकर भाग जाया करते हैं :—

वीर बातों के पिता जो काम के होते नहीं;
जो चमकते हैं, हमेशा वे खरे होते नही ।

रावण—तो फिर क्या करना चाहिये ?

प्रहस्त—मेरे विचार में अधर्म से डरना चाहिये, और जानकी को लौटाकर निश्चिन्त राज करना चाहिये !

रावण—तो यह क्यों नहीं कहते कि कायर बन जाऊं ! अपने नाम

पर कलंक जगाऊं और जानकी को लौटाकर संसार में डरपोक कहलाऊं ।

प्रहस्त—डरपोक नहीं पिता जी ! आपका कल्याण होगा; परलोक में गति और लोकों में सम्मान होगा !:—

कर्म जिसके नेक हैं और कल्पना गम्भीर है ।
वह नहीं कायर कभी वीरों में उत्तम वीर है ।।

रावण—अरे धूर्त ! क्या तू भी शत्रु का पक्षपाती हो गया ? द्रोही विभीषण की तरह विश्वासघाती हो गया ?

जन्म लेकर मेरे कुल में नीच पामर बन गया,
कह रही है तेरी बातें तू भी कायर बन गया ।

प्रहस्त—नहीं पिता जी ! मैं कायर नहीं, आपका सच्चा आज्ञाकार हूं आपके और लंका के लिये हर समय जान देने को तैयार हूं !

रावण—तो फिर ऐसी कायरता की बातें क्यों बनाता है ? रावण का पुत्र होकर नीचता क्यों सिखाता है :—

शत्रुओं से हार कर इस कुल को मत बदनाम कर ।
वीर की सन्तान है तो वीर का ही काम कर ।।

प्रहस्त—परन्तु पिता जी ! अधर्म को छोड़ कर धर्म को अपनाइये, कुमार्ग से हटकर सत्मार्ग पर आ जाइये और फिर देखिये कि मैं आपके पसीने की जगह किस तरह रक्त बहा दूंगा, यदि यमराज भी सन्मुख होगा तो उसके भी छक्के छुड़ा दूंगा ।

रावण—प्रहस्त ! मैं तुम से उपदेश नहीं केवल पितृभक्ति चाहता हूं । यदि तुम मेरी सन्तान हो तो मेरी आज्ञा का पालन करो, शत्रुओं से युद्ध करके उनका दमन करो ।

प्रहस्त—हां-हाँ आप जानकी को लौटाकर युद्ध आरम्भ कीजिये और फिर प्रहस्त का पराक्रम देखिये :—

जानकी पाकर भी जो छेड़ेंगे वे संग्राम को ।
मैं अकेला जाके दिखलाऊंगा नीचा राम को ।।

युद्ध निर्दोषों मे पर मुझ से किया जाता नहीं।
पक्ष लेकर पाप का लडना मुझे भाता नहीं ।।

रावण—फिर वही कायरता की बात ! फिर वही शत्रुओं का पक्ष-पात अरे नादान ! मेरी आज्ञा से इन्कार न कर ! मुझे अपने स्वाभाविक क्रोध पर तंयार न कर ।

प्रहस्त—कुछ भी हो पिता जो ! झूठी हां में हां नहीं मिलाऊंगा, देखती आंखों लङ्का को पतन की ओर नहीं ले जाऊंगा :—

हर समय तयार हूं लंका की सेवा के लिये ।
जान दे सकता हूं अपने कुल की रक्षा के लिये ।।
झोंक दीजे आग में इच्छा यदि हो आप की ।
पर नहीं अपनाऊंगा नीति कभी मैं पाप की ।।

रावण—तो क्या यह हठ नहीं छोड़ेगा ?

प्रहस्त—नहीं !

रावण—राम से युद्ध नहीं करेगा ?

प्रहस्त—नहीं !

रावण—मेरी आज्ञानुसार नहीं चलेगा ?

प्रहस्त—नहीं ! इस प्रकार कभी नहीं !

रावण—तो चल ! जहां तेरा विद्रोही चचा गया है वहीं तू भी निकल ।

[धक्का देकर निकाल देना]

रावण—मन्त्रियों और सभासदों ! सोचो विचारो और कहो संसार में किस का राज है ?

सब—लंकेश रावण का !

रावण—देवता, गन्धर्व और दैत्यों का कौन महाराज है ?

सब—लंकेश रावण !

रावण—शिव, ब्रह्मा, विष्णु का कौन सरताज है ?

अंगद—(आकर) ओह ! इतना अभिमान ! इतना अहंकार ! इतनी ढिठाई ! :—

हो न अन्धे इस कदर तुम मोह के जंजाल में ।
एक दिन पड़ना पड़ेगा काल के भी गाल में ।।
दिव्य मुखमण्डल पै होगी मुरदनी छाई हुई ।
शान होगी वक्त के पैरों से ठुकराई हुई ।।

रावण—हैं कौन ? वानर या मानव सन्तान !

अंगद—देख और पहचान !

रावण—ओह ! निडर वानर ! मृत्यु के ग्रास प्राणी ! तूने हमारे वैभव को इतना भुलाया कि निर्भय होकर दरबार में चला आया सच बता तू कौन है ?

अंगद—बाली का पुत्र, श्री राम चन्द्र जी का दूत ।

रावण—बोल क्या कहना चाहता है ?

अंगद—लंकेश ! तुम्हारा कुल श्रेष्ठ है । तुम पुलिस्त मुनि के नाती हो । तुम ने शिव और ब्रह्मा का वरदान पाकर इन्द्रादि देवताओं को जीत लिया है किन्तु वेदों के ज्ञाता होकर ऐसा पाप कर्म किया है :—

हर के लाये जानकी माता नहीं अच्छा किया ।
पाप के पथ पर चले,जो कुछ किया बेजा किया ।।

रावण—गंवार, सोचकर नहीं बोलता, अमृत के पात्र में विष घोलता है । जानता नहीं कि मैं कौन हूं :—

जिससे भय खाता है नभमंडल वह योद्धा मैं हा हूं ।
पूजता है जिसको भूमण्डल वह प्रतिमा मैं ही हूं ।।
मैं हूं विष्णु विश्व का लोकों का ब्रह्मा मैं ही हूं ।
दास हैं जिस के दनुज-दानव वह राजा मैं ही हूं ।।
चान्द, तारे, व्योम और पृथ्वी मनाते हैं मुझे ।
जल, पवन, अग्नि, वरुण, यम सिर झुकाते हैं मुझे।।

अंगद—हां जानता हूं परन्तु सदैव किसी की नहीं रहती है; मायारूपी नदी सदा एक ही दशा में नहीं बहती है। यदि तुम अपना भला चाहते हो तो मेरी बात सुनो, दान्तों में तिनका दबा, गले में कुठार डाल, आधीनता के साथ जानकी को साथ लेकर प्रभु की शरण जाओ और जो कुछ कर चुके हो उसके लिये क्षमा चाहो !

रावण—नहीं ना !

अंगद—नहीं तो बुरा परिणाम होगा, नरक वास और लोकों में बदनाम होगा !

रावण—अरे नीच ! कुल को कलंक लगाने वाले ! बाली का नाम मिटाने वाले ! तू कहां से हो गया ? तेरी माता का गर्भ न गिर गया ! तेरे जैसा कपूत पैदा होते ही न मर गया ?

शर्म की है बात ऐसे कुल में यह सन्तान हो।
फूल की टहनी में पैदा बज्र और पाषाण हो॥
नाम को घातक बने सन्तान जो मां बाप की।
वह नहीं सन्तान बेशक साक्षी है पाप की॥

अंगद—(व्यंग्य से) ओहो आपको अपने माता पिता के नाम की बड़ी चिन्ता है; तभी तो पराई स्त्री को चुराकर उनकी कीर्ति को उज्जवल किया है :—

क्यों न जग में नाम हो कैसे न फिर कल्याण हो।
धन्य वे मां बाप जिनकी आप सी सन्तान हो॥

रावण—(मीठे भाव से) अरे तू मेरे मित्र का पुत्र है, इसीलिए मैं तेरी बातों का बुरा नहीं मानता हूं बल्कि तुझे अपना हितैषी करके जानता हूं ! सब व्रता वालो तो कुशल से है ?

अंगद—शान्ति कीजिये ! केवल दस दिन और शान्ति कीजिये। फिर बाली के पास जाकर स्वयं ही राम की शत्रुता का परिणाम पूछ लीजिये :—

कोई दिन में ही लङ्का में अन्धेरा होने वाला है।
दिशाएं कह रही हैं नाश तेरा होने वाला है॥

रावण—अरे दुष्ट! तू क्या बक रहा है? याद रख कि मेरा क्रोध अन्दर ही अन्दर दहक रहा है। तू दूत है:—

नही तो एक दम-नामो निशां तेरा मिटा देता।
जबां जो चल रही है उसके सौ टुकड़ बना देता॥
जला देता अग्न में जहर का प्याला पिला देता।
पकड़कर रौंद देता काल का भोजन बना देता॥
मसल देता भुजाओं में, डुबा देता समन्दर में।
उड़ा देता बनाकर हड्डियो को राख अम्बर में॥

अंगद—लंकेश! तुम भूल रहे हो, अपनी शक्ति को सबसे अधिक समझकर अभिमान मे फूल रहे हो। तुम यह नहीं जानते कि जब राम इधर आएंगे, तो सारे बल बिरते धरे ही रह जाएंगे।

लगेंगे आके साने में धनुष से बाण जब तेरे।
समर भूमि में निकलेंगे अधर्मी प्राण जब तेरे॥
तुझे जब काल के प्रहार हर सूरत दबा लेंगे।
लगाकर ठोकरें जब सीस को वानर उछालेंगे॥
पता तब ही लगेगा तुझ को जीवन की कहानी का।
चिङ्गारा आग की थी बुलबुला था एक पानी का॥

रावण—बुलबुला? अरे मूर्ख! क्या रावण का सामना करना बच्चों का खेल है? क्या हाथी का और चिटी का भी कोई मेल है? जरा यह तो बतला कि तुम्हारी सेना में कौन सा योद्धा है? जिसका देखो वही कमजोर और बोदा है। राम है सो स्त्री के वियोग ने दुखी बनाया है और लक्ष्मण को भाई के सन्ताप ने खाया है। तुम और सुग्रीव दोनो सेना के रखवाले हो हमारे वीरों के सामने कहां ठहरने वाले हो। विभीषण जन्म से डरपोक है, जाम्बवन्त का बुढ़ापे का शोक है। नल-नील को हम

गिनती नहीं मानते, क्योंकि वे शिल्प के सिवा और कुछ नहीं जानते। परन्तु हा वह वानर अवश्य है जो यहां पहले आया था और जिसने अक्षयकुमार को मारकर लंका को जलाया था परन्तु जब समय आयेगा तो उसे भी देखा जायेगा :—

ध्यान में लाऊं तो लाऊं कौन से योद्धा को मैं ?
कीट भुंगे जानता हूं वानरी सेना को मैं ॥
कायरो सब काल का भोजन हो मेरे सामने।
मैं हूं अग्नि और तुम ईंधन हो मेरे सामने ॥

अंगद—ओहो ! तुम उस साधारण से वानर को तो इतना गरदानते हो परन्तु प्रभु के बल और पराक्रम को नहीं जानते हो। याद रखो नदी के प्रवाह के सामने तिनका पांव नहीं अड़ा सकता। आकाश में धूल फेंक कर कोई सूर्य को नहीं छिपा सकता :—

जिनकी करुणा लोक और परलोक को प्रतिपाल है।
कोप जिनका जग प्रलय है, काल है, भौंचाल है ॥
मित्रता अमृत है जिनको, क्रोध जिनका आग है।
जिनका परमानन्द में डूबा हुआ अनुराग है ॥
छेड़ कर उनको ही रावण आग में पड़ता है क्यों ?
बनके अन्धा मूर्ख कुश्ती काल से लड़ता है क्यों ?

रावण—(हंस कर) क्यों नहीं ! आखिर तो वानर ही है। वृक्षों पर रहने वाले पशु और क्या बोल सकते हैं ? उनको तो उत्पात ही प्यारा होता है। अरे कुलकलङ्की ! दुष्ट, पाजी ! तू इतनी निर्लज्जता पर आ गया कि उन साधुओं का पक्ष लेकर अपने पिता को भी खा गया :—

पाप की कालस लगाई तूने अ ो आन पर।
बेहया ! बेशर्म ! थ है तेरी झूठी शान पर ॥
रक्त से जिसके अरे निर्भाग तू पैदा हुआ।
बन के शत्रु वा सहाई उस पिता को खा गया ॥

अंगद—हां पिता को खा गया परन्तु तेरे खाने में इसलिये संकोच है कि तू पिता की प्रसिद्धि का कारण है। दुनिया जानती है कि जिस को बाली ने कांख में दबाया था यह वही रावण है, यदि ऐसा नहीं होता तो।

तख्त को तेरे उलट कर नाश कर देता अभी।
काट कर सिर राम के चरणों में धर देता अभी॥

रावण—ओ मूर्ख ! घमण्डी ! निर्लज्ज ! तूने अभी तक मेरा नाम नहीं सुन पाया है जो इतनी ढिटाई करने पर उतर आया है।

अंगद—नाम ? हां सुना है कि आपका नाम रावण है ! परन्तु एक रावण तो राजा बलि को जीतने के लिये पाताल गया जिसको बालकों ने घुड़साल में बांध लिया और एक रावण कार्तवीर्य के चँगुल में आया जिसको पुलिस्त मुनि ने कठिनता से छुड़ाया। तीसरे रावण को मेरे पिता बाली ने कांख में दबा लिया और सन्ध्या करने तक एक ढले के समान छिपा लिया। अब बतलाइये कि आप उनमें से कौन से रावण हैं।

रावण—(हंस कर) बच्चा है ! नादान है, गहवारे का बालक दुनिया से अनजान है। मूर्ख ! मैं वह रावण हूं जिसने कई बार अपने शीस काट-काटकर महादेव जी का पूजन किया है जिसने अपनी शक्ति से देवताओं को परास्त किया है। जिसके हृदय की कठोरता को समस्त संसार जानता है। जिसके बल और पराक्रम को सारा विश्व मानता है :—

मही डोले, गगन कांपे, कदम मेरे जमाने से।
हिले जाते हैं पर्वत भी जरा सा लब हिलाने से॥
सहम जाते हैं दानव-देव सब आंखें दिखाने से।
हुआ है काल भी भयभीत अब लंका में आने से॥
मेरे आतंक से वैभव कलेजा थाम लेता है।
है क्या गिनती यहां उनकी तू जिनका नाम लेता है॥

अंगद—ओहो ! यदि ऐसे ही वीर थे तो सहस्रबाहु को जीत कर क्यों न बल दिखाया ? धनुष तोड़कर क्यों न नाम पाया ? आह ! मैं विवश हूं नहीं तो तुझे भूमि पर पटक, सारी सेना को मार, नगर को चौपट करके मन्दोदरी सहित जानकी को ले जाता :—

सहे हैं सिर झुकाकर आज सब कड़वे वचन तेरे।
पिये हैं विष की घूंटों की तरह पापी कथन तेरे ॥
अगर बनकर न आता दूत तो लेखा चुका देता।
पलों में भाव आटे-दाल का तुझ को बता देता ॥

रावण—धूर्त तेरी इतनी ढिठाई ! मेरे सामने उन तपस्वियों की ऐसी बड़ाई :—

भटकते फिर रहे हैं आज तक नारी की चिन्ता में।
योंही मर जाएंगे रोते बिलखते घोर विप्ता में ॥

अंगद—अभिमानी ! जिनके भय से हजारों अहंकारी कांप गये, जिनकी तीखी चितवन से परशुराम का अभिमान भाग गया, तू उनको डराना चाहता है। जिनके होठों के हिलते ही संसार प्रलयमग्न हो जाता है तू उन पर आतंक जमाता है ! उन्हें साधारण मनुष्य समझता है,प्रभु के कोप से नहीं डरता है :—

बनाया कल्प को इक वृक्ष, दीपक ध्रुव तारा को।
अमरजल को कहा पानी, नदी गंगा की धारा को ॥
शशि को आग, धनु गाय, और चिन्तामणि पत्थर।
कहा पक्षी गरुड़ को और हीरे को कहा कंकर ॥
अधर्मी ! लोक सा बैकुंठ का स्थान बतलाया।
हुआ अज्ञान जो भगवान को इनसान बतलाया ॥

रावण—बस बस, ओ धूर्त चांडाल ! आगे शब्द न निकाल ! नहीं तो जीभ तालू से निकलवा दूंगा, जिनके बिरते पर उछलता फिरता है उनका नाम ही ससार से मिटा दूंगा।

न छोड़ूंगा जगत में ऐसे पापी का निशां बाकी।
उड़ेंगे व्योम में पुरजे न होंगी धज्जियां बाकी।।
बनूगा क्रोध की बिजली झुलस दूंगा,जला दूंगा।
मिटा कर पल में जीवन लाश कुत्तों को खिला दूंगा।।

अंगद—दुष्ट ! इतना अभिमान ! मेरे सामने भगवान का यह अपमान !:—

नीच अपने पाप-कर्मों का तमाशा देख ले।
शक्तियां भी छोड़ती हैं साथ तेरा देख ले।।

[भूमि पर हाथ मारना, रावण के मुकट गिरना, अंगद का उन्हें उठाकर फेंकना]

रावण—(भड़क कर) ओह ! इतना निर्लज्ज !:—

चढ़ गया सिर पर घमण्डी, नीच पापी, बेहया।
इस कदर बोचल, जो आया जबां पर कह गया।।
याद रख अब भी अगर बकवास करता जायगा।
ठोकरें गलियों में पाजी सीस तेरा खायगा।।

अंगद—मूर्ख ! तुझे गाल बजाते लाज नहीं आती ? हमारा पराक्रम देखकर भी तेरी छाती नहीं फट जाती ? स्त्री-चोर ! कामी! मन्द बुद्धि ! पाखण्डी ! ले, अपनी वीरता का एक दृश्य दिखाता हूं। तेरे सामने पृथ्वी पर पांव जमाता हूं यदि तेरा कोई वीर इसे उठा देगा तो अंगद सौगन्द खाकर कहता है कि जानकी को हार जायेगा :—

दिशा को भूल कर सूरज अंधेरे में भटक जाये।
रसातल नभ को चल दे चन्द्रमा नीचे सरक आये।।
विमुख हो जाए शंकर और ध्वजा कैलाश की बदले।
समुन्दर सूख जाये और गति आकाश की बदले।।
पवन जलने लगे, अग्नि से जल की धार बह जाये।
कथन झूठा न होगा चाहे गंगा जम के रह जाये।।

(पैर जमाना)

रावण—योद्धाओ ! अब क्या देखते हो, इसका पैर तुरन्त उखाड़ दो.
भूमि पर पटक कर इसी दम पछाड़ दो। :—
इस तरह पीसो कि इसका नाम तक ना पा सके।
धूल तक उड़ कर न इसकी रामादल में जा सके॥

सभासद (१)—हुआ है हुक्म जो सरकार का फौरन बजा लाऊं।
उठा दूं पैर पृथ्वी से तभी बलवान कहलाऊं॥

[थक कर बैठना]

सभासद (२)—हिलाऊ पैर क्या सारे को भोजन जान कर खा लूं
अगर हो हुक्म तो इक आन में भूमि हिला डालूं

[हार कर बैठ जाना]

मन्त्री—यह पग तो चीज क्या, फौलाद का खम्बा हिला दूंगा।
हिमाचल की जड़ें भी खोखली करके दिखा दूंगा॥

[जोर लगाकर थक जाना]

सेनापति—नहीं पहुंचा है इस का पग तो भूमि के धरातल तक।
उठाकर फेंक दूं पहुंचा हुआ हो गर रसातल तक॥

[लज्जित होकर बैठ जाना]

रावण—मेघनाद !:—
देखता क्या है उठा कर फेंक दे आकाश पर।
ता न रोये कोई ऐसे बेहया की लाश पर॥

मेघनाद—देर थी बस हुक्म की अब देर इक पलकी नहीं।
है इशारे की ही केवल बात बल की नहीं॥

[जोर लगा कर थक जाना]

ओह !:—
एक तिल सरका न पग शक्ति यों ही बरबाद की।
वज्र का खम्बा है मानो लाठ है फौलाद की॥

[हार कर बैठ जाना]

रावण—(उठ कर) हैं ! :—

है कोई जादू या टोना या छलावा है कोई।
देखता हूं पैर है इसका कि धोखा है कोई ॥

अंगद—(पांव को उठाकर) बस लंकेश ! :—

बनके क्यों अनजान तू अज्ञान के पथ पर चला।
पांव छूने से मेरे होगा नहीं तेरा भला ॥
काम वह कर जिससे निकले शक्ल कुल आराम की।
चाहता है मोक्ष तो जाकर शरण ले राम की ॥
जान ले करुणा प्रभु की लोक का कल्याण है।
अन्यथा अब युद्ध का ऐलान है, ऐलान है ॥

[अंगद का जाना, रावण का लज्जित होकर बैठना, परदा गिरना]

दृश्य आठवां

(राम का शिविर)

राम—समय बहुत हो गया परन्तु अंगद जी लौटकर नहीं आये ! जाने कुशल भी हैं ?

सुग्रीव—महाराज ! बड़े अभिमानी को समझाना है, एक हठधर्मी को राह पर लाना है।

विभीषण—कुछ भी हो, परन्तु उसे समझाना बिल्कुल निराधार है क्योंकि उसके सिर पर तो अहंकार का भूत सवार है !

राम—यह ठीक है, परन्तु हमने तो नीति का पालन किया है, वह माने या न माने यह उसकी इच्छा है !

हनुमान—लीजिये महाराज ? अंगद जी आ रहे हैं।

[अंगद का आना और राम के चरण छूना]

अंगद—महाराज, प्रणाम !

वानर—अरे पाखण्डी ! जरा इधर तो आ, राम को पीछे देखना पहले हमें ही अपना पराक्रम दिखा ।

मेघनाद—अरे भाड़े के टट्टू ओ ! तुम मुफ्त में क्यों जान गंवाते हो ? मेघनाद के सामने आकर काल के मुंह में क्यों जाते हो ? जाओ वृक्षों पर कूद-फांद कर फल खाओ और राम-लक्ष्मण को मेरे सामने करके प्राणों का वरदान पाओ :—

जंगलों के तुम पशु तुम को किसी की क्या पड़ी ?
आके मरने दो उसी को जिस के सिर पर आ पड़ी ।।

[युद्ध होना, वानरों में भगदड़ पड़ना]

हनुमान—(आकर) बस-बस ओ अन्यायी मेघनाद ! इतने अभिमान में क्यों आ रहा है ! निर्दोष वानरों को मार कर पाप की संख्या क्यों बढ़ा रहा है ?

मेघनाद—आ ! ओ लंका को जलाने वाले दुष्ट वानर, आ ! उस दिन तू बचकर भाग आया था परन्तु आज न जाने पायेगा, यमपुर पहुंच कर नरक के ईंधन को बढ़ायेगा ।

हनुमान—ओ कुकर्मी ! निर्बलों को सताकर अभिमान में न फूल; बल और वैभव पाकर मौत के दिन को न भूल ।

मेघनाद—हां मैं समझ गया कि तू जब तक उचित दण्ड नहीं पाएगा तब तक सीधी राह पर नहीं आयेगा ।

हनुमान—अच्छा तो आ ! बातें छोड़ और कर्म दिखा ।

[युद्ध होना, विभीषण का आना]

विभीषण—ठहर मेघनाद ! क्या कर रहा है ?

मेघनाथ—ओहो कुलघातक, देशद्रोही चचा ! आओ, मैं तुम से भी हाथ मिलाऊंगा, बड़े भाई को धोखा देने का फल अच्छी तरह चखाऊंगा :—

द्रोह जो तुमने किया है दण्ड उसका पाइये,
वृक्ष जो बोया है विष का, फल भी उसका खाइये।

विभीषण—मेघनाद ! तू अभी बालक है इतने क्रोध में न आ ! अग्नि में कूद कर अपने प्राण न गंवा। याद रख, मैं नीति के विरुद्ध चलना नहीं चाहता हूं; भतीजा पुत्र के समान होता है इसी-लिए तुझे इतना समझाता हूं।

मेघनाद—ओहो ! तुम हमारे बड़े शुभचिन्तक हो जो हमें नीति का उपदेश सुनाते हो मानों उदारता के रूप बन कर दूसरों का कल्याण चाहते हो :—

किया गैरों को अपना, आंख अपनों से बदल बैठे।
जरा नर्मी जहाँ देखी वहीं फौरन पिघल बैठे॥

विभीषण—ठीक है :—

समझ में किस तरह आये फंसे मृत्यु के चक्कर में।
किया उपदेश जो तुम को, लगाई जोंक पत्थर में॥

मेघनाद—पत्थर में जोंक लगाने का स्वाद तो उसी दिन मिल जाता जिस दिन पिता जी के विरुद्ध जबान खोली थी। भरे दरबार में अनुचित वाणी बोली थी; परन्तु क्या बताऊ तुम्हारे भाग्य ही अच्छे थे !

विभीषण—तो तुम कर ही क्या सकते थे !

मेघनाद—यह न पूछो कलंकी चचा ! यदि खैर चाहते हो तो अपना काला मुख मुझे न दिखाओ और दुम दबाकर फौरन भाग जाओ !

विभीषण—युद्ध में भागना तुम जानते हो ! मैं बूढ़ा ही सही परन्तु तुम्हारे लिये फिर भी बहुत हूं !

मेघनाद—अच्छा यह बात है ! तो चल दुराचारी, नीच बेहया अब परलोक की हवा खा।

[युद्ध होना विभीषण का घबराना अंगद का आना]

अंगद—बस-बस क्या करता है नादान ?

मेघनाद—ओहो ! अब आ गये बलवान ! अरे मूर्ख, यह सभा नहीं है सग्राम-भूमि है खेलने की जा नहीं है।

अंगद—हां हां, तूने सभा में तो बड़ा पराक्रम दिखलाया था जो यहां तीर चलायेगा, अरे अभिमानी देख लेना कि यहां भी भागता ही नजर आयेगा :—

वीर था तो कर्म क्यों उस दिन दिखाया था नहीं ?
पैर अंगद का मही से क्यों उठाया था नहीं ।।

मेघनाद—अच्छा यदि ऐसा ही वीर है तो इतना क्यों चिल्लाता है। आगे बढ़, पीछे क्यों हटता जाता है ! :—

[युद्ध होना और किसी का न हारना परदा गिरना]

दृश्य ग्याहरवां

(रामादल की छावनी)

राम—आज के युद्ध को अब तक कोई सूचना नहीं मिली। न जाने मेघनाद परास्त हो गया है या नहीं !

दूत—(आकर और प्रणाम करके) महाराज की जय हो ! मेघनाद बड़ा अनर्थ ढा रहा है, अकेला ही हमारे पक्ष के सारे वीरों को अधीर बना रहा है।

राम—(आश्चर्य से) ओहो ! यह बात है !

दूसरा दूत—(आकर) महाराज की जय हो ! हनुमान, अगद और विभीषण सभी युद्ध कर चुके परन्तु मेघनाद, अब तक बराबर लड़ रहा है। किसी प्रकार भी गिरने में नहीं आता है !

राम—तो कोई बात नहीं ! मैं अभी चलता हूं !

लक्ष्मण—(हाथ जोड़कर) प्रभो ! आज तो मुझे ही जाने दीजिये : कृपा करके कुछ मेरा ही उत्साह निकल जाने दीजिये !

राम—प्यारे लक्ष्मण ! तुम्हारे जाने से वैसे तो कोई हरज नहीं, परन्तु मेघनाद बड़ा अनुभवी बलवान है युद्ध कौशल में बहुत सुजान है! इसने देवताओं को जीत कर लंका का दास बनाया है और इन्द्र को परास्त करके इन्द्रजीत नाम पाया है !

लक्ष्मण—तो बात ही क्या है महाराज ! मैंने भी ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके ऐसे ही शूरवीर को मारने का बीड़ा उठाया है !

राम—हां ! यह हम अच्छी तरह जानते हैं।

लक्ष्मण—तो फिर आज्ञा दीजिये ! लक्ष्मण के विषय में कोई चिन्ता न कीजिये ! :—

काल भी जो युद्ध में लड़ने को समुख आयगा।
लक्ष्मण से छूटकर वह भी न जाने पायेगा ॥

राम—अच्छा ! यदि तुम्हारा ऐसा ही उत्साह है तो जाओ, और मेघनाद के सामन अपना पराक्रम दिखाओ; परन्तु सावधान र ना, वह दावघात में बड़ा चतुर है उसके छल से बचते ही रहना !

लक्ष्मण—आप निश्चिन्त रहें !

[लक्ष्मण का जाना परदा गिरना]

दृश्य बारहवां

(समरभूमि)

लक्ष्मण—(आकर) कहां है ? वह अन्यायी रावण का पुत्र, कहां है जिसको अपने बल और पराक्रम पर बड़ा अभिमान है जो समझता है कि वह सारे विश्व में सब से अधिक बलवान है !

मेघनाद—आ ! ओ मौत के खरीदार ! इधर आ मैं तुझे बहुत देर से ढूंढ रहा था। अब तू भी परलोक की हवा खा :—

खेल खेले बालकों में वीर तो पाया न था।
बच रहा था सामने जब तक मेरे आया न था॥

लक्ष्मण—ओ अहंकार के पुतले ! आज मैं तेरा सारा अभिमान धूल में मिलाऊंगा, इन्द्र को जीतने वाली इन विशाल भुजाओं को निष्फल बनाऊंगा :—

आग बरसाते हुए वाणों की बौछारों के बीच।
वीरता की जांच होगी आज तलवारों के बीच॥

मेघनाद—जा-जा, वीरता की जांच करने वाले मैंने बहुत देखे हैं; बातों के तीर चलाने वाले कर्म के ओछे ही होते हैं :—

कर चुका है बहुत बातें राड़ भी तकरार भी।
जानता है युद्ध करना तो चला हथियार भी॥

[तीर चलाना]

लक्ष्मण—अच्छा तो ले सम्भल !:—

जो अब तक मर चुके हैं उनकी अब गिनती बढ़ा जाकर।
किये हैं पाप जो अब भोग ले उनकी सजा जाकर॥

मेघनाद—तो देख ! अब कौन विजय पाता है और कौन परलोक जाकर मरने वालों की गिनती बढ़ाता है। सावधान !

[युद्ध होना, मेघनाद का घबरा जाना]

मेघनाद—(एक ओर होकर) ओह! यह देखने में तो बालक ही दिखाई देता है परन्तु लड़ने में बड़े दांव—घात से काम लेता है। इसने मेरे सारे हथियारों को निष्फल कर दिया; देवताओं को परास्त करने वाली भुजाओं को निर्बल कर दिया। अब यदि वीरघातिनी शक्ति नहीं चलाता हूं तो इसके हाथ से मारा जाता हूं (शक्ति उठाकर) बस लक्ष्मण ! बस ! अब बहुत जीत

चुका; अधिक आपे से बाहर न निकल ! चल सीधा यम के द्वार चल ?

क्या खड़ा है सामने कर में धनुष तोले हुए।
आ रहा है देख तेरा काल मुंह खोले हुए ।।

[शक्ति चला देना]

लक्ष्मण—(घबरा कर) ओह ! पापी, यह कैसा शस्त्र चला दिया ?

[लक्ष्मण का मूर्छित होकर गिरना, राक्षसों का उनको उठाने की कोशिश करना पर असफल होकर लौट जाना]

वानर—अरे ! यह क्या हो गया ? लक्ष्मण जी तो एक दम मूर्छित हो गये ।

अंगद—हाय ! हाय ! बड़ा अनर्थ हुआ ? अब हम प्रभु को क्या उत्तर देंगे ?

सुग्रीव—हे विधाता ! यह क्या कर दिखाया ? सारी आशाओं को ही मिट्टी में मिला दिया ।

हनुमान—ओह ! यह क्या ?

भाग्य ने लूटा है किस्मत दे गई धोखा हमें ।
देखिये विधना दिखाये दुःख अब क्या-क्या हमें।।
शान्ति सन्तोष के सामान थे सारे गये ।
लुट गये भगवान ! जीते जागते मारे गये ।।

[लक्ष्मण को उठाकर ले जाना परदा गिरना]

दृश्य तेरहवां

(रामादल की छावनी)

राम—हैं । आज मन अधीर क्यों हुआ जाता है ? बार-बार हृदय क्यों घबराता है ? विधाता ! कुशल तो है ? आज कौनसी गति होने वाली है ?

छाती उमड़ रही है, आंसू भी फूटते हैं।
आंखों के सामने कुछ तारे से टूटते हैं॥
मन तिलमिला रहा है सन्तोष खो रहा है।
आता नहीं समझ में क्या भेद हो रहा है॥

[हनुमान का लक्ष्मण को लिये हुए प्रवेश]

राम—(घबरा कर) हैं यह क्या ? लक्ष्मण को क्या हो गया ?

हनुमान—महाराज ! भाग्य फूट गये ! आशाएं साथ छोड़ चलीं, तकदीर धोखा दे गई :—

बैठते जिसके सहारे वह सहारा गिर गया।
नाथ! आशाओं पै अपनी आज पानी फिर गया॥

राम—(देखकर) आह ! यह तो मर्मस्थान पर चोट आई है जिसने सारी काया ही मृतक के समान बनाई है। (रोना)

हनुमान—हां प्रभो ! पापी मेघनाद ने शक्तिवाण चलाया और बड़ा घातक आघात पहुंचाया !

राम—(सिर पिट कर) बस-बस ! अब क्या रह गया है ? सारा साँसारिक खेल ही समाप्त हो चुका है !

जा सकूंगा अब न वापस लौट कर लंका से मैं।
अब गई दुनिया मेरे से और गया दुनिया से मैं॥

गाना

कर चला बरबाद लक्ष्मण ! तू सदा के वास्ते !
लुट गया संसार मेरा सर्वदा के वास्ते॥
मैं तो पहले से ही था भाई सताया भाग्य का।
उठ खड़ा हो मत सता परमात्मा के वास्ते॥
किस के बल साहस पै होगा राम को सन्तोष अब।
याद किस की अब रहेगी चेष्टा के वास्ते॥
घर, नगर,सुख,सम्पदा खोने का मुझ को था न गम।
पर नहीं सन्तोष तुझ बिन आत्मा के वास्ते॥

बोल-बोल ! भाई ! मुझे कहां छोडे जाता है ? एक बार तो बोल !

तुमने घरबार तजा साथ में आने के लिये ।
ठहर मैं भी तो चलूं साथ निभाने के लिए ।।

सुग्रीव—शान्ति कीजिये प्रभो ! शान्ति कीजिये !

राम—शान्ति ! शान्ति तो लक्ष्मण के साथ गई सुग्रीव जी ! अब शान्ति करने का साधन ही कहाँ है ?

हाय कैसा पाप जीवन में कमाया राम ने !
स्त्री के मोह में भाई गंवाया राम ने ।

लक्ष्मण ! तुम कहां हो ? देखो मैं रो रहा हूं, तुम्हारे वियोग में दुखी हो रहा हूं ! तुम तो मुझे मलीन देखते ही बेचैन हो जाते थे ! क्या आज इतने कठोर बन गये ! बोला-बोलो कुछ तो बोलो !

मिटाओ इस तरह संसार से मुझको न हे भाई !
करो कुछ तो दया आंखों ने है जलधार बरसाई ।।

गाना (तर्ज—विपत पड़ी भारी, उठ जारे भय्या)

टेक—विकल मन मेरा-धरे नहीं धीर !

अन्तरा १—नगरी छोड़ी, सुख भी छोड़ा किया वनों में डेरा ।
होनी आई साथ यहां भी, आन दुखों ने घेरा,
धरे नहीं धीर·····

२—आपत-काल पड़ा मुझ पर था एक भरोसा तेरा ।
क्या सोचा भाई तुमने भी, मुख मुझसे क्यों फेरा ।।
धरे नहीं धीर·····

३—धीरज मन को हो कैसे, है संकट शोक घनेरा ।
खोटे दिन आये हैं मेरे, विधना ने दुख गेरा ।।
धरे नहीं धीर·····

४—पूछेगी जब मात सुमित्रा—कहां लाडला मेरा ?
क्या उत्तर दूंगा मैं भैया! कुशल सोच मन घेरा।
धरे नहीं धीर·····

आह ! अनर्थ हो गया ! सारा जीवन ही व्यर्थ हो गया; हाय ! जानकी को कौन छुड़ायेगा ? आपत्ति के समय मेरा हाथ कौन बटायगा :—

सारी आशाएं गई हैं भाई के जीवन के साथ।
मौत आ जाये मेरी भी काश अब लक्ष्मण के साथ ।।

सुग्रीव—प्रभो ! रोने से आपत्ति कहां टलती है, मुसीबत को जितनी याद करो उतनी ही बढ़ती है।

राम—क्या करूं सुग्रीव जी ! राजपाट और सुख-सम्पदा को छोड़ कर वनों में चला आया, भरत जैसे आज्ञाकारी भाई को निराश लौटाया; पिता का मरण सहा, जानकी का हरण सहा। अब कहां तक सहन करूं, लक्ष्मण का वियोग कैसे दमन करूं।

जिसमें थे आराम के साधन वह दुनिया ही गई।
लक्ष्मण क्या चल दिया जीने की आशा ही गई ।।

गाना

साथी तो छोड़ के चल दिये, पंथी बिचारा रह गया।
नाव नाव भंवर में फंस गई, दूर किनारा रह गया ।।
घर से तो दूर थे ही हम, सहते थे रोज गम पै गम ;
जो कुछ था वह भी लुट गया, भाग्य का मारा रह गया।।
रावण को अब हराये कौन ? लंका विजय कराये कौन ?
प्यारी तुम्हें मिलाये कौन, किसका सहारा रह गया ?
करके चले थे हम परण, पापों का हो 'कुशल' दमन।
आशा का दीप बुझ गया, सोच विचारा रह गया ।।

विभीषण—महाराज ! शान्ति से काम लीजिये और लक्ष्मण के प्राण बचाने का कोई उपाय कीजिये।

राम—तो बताओ ! विभीषण जी ! तुम ही कोई उपाय बताओ ! सकट के समय तुम हो कुछ धीर बधाओ

विभीषण—महाराज ! लंका में सुषेन नाम का एक बड़ा प्रसिद्ध वैद्य रहता है। आप किसी को भेजकर उसको बुलवाइये और लक्ष्मण जी की नाड़ी दिखलाइये।

राम—हनुमान जी ! इस समय और कौन जायेगा ! यह कठिन काम और किसी के बस में न आयगा !

हनुमान—तो बात ही क्या है महाराज ! मैं पवन के समान जाता हूं और वैद्य को गृह समेत ही उठा लाता हूं।

[प्रणाम करके जाना]

राम—हे दुःख हरण शोक नाशक भगवान ! इधर भी देखिये हे भय-भञ्जन प्रभो ! मेरी ओर भी निहारिये ! :—

तुम्हें मालूम है सारी खबर जगदीश पल-पल की।
दया करना दुखी पर भी बधाना धीर निर्बल को॥
तेरी करुणा अगर हो तो अभी दुख दर्द खो जाये।
वह आये वैद्य और आते ही जीवन रूप हो जाये॥

गाना

अब तो खबर लो भगवन, सन्ताप पा रहा हूं।
संकट का हूं सताया, आंसू बहा रहा हूं॥
जीवन से तंग आकर होकर निराश जग से।
आशा पै इक तुम्हारी, आशा लगा रहा हूं॥
आपत्तियों की अग्नि चारों तरफ है भड़की।
और बीच में अकेला मैं बिलबिला रहा हूं॥
आशा की डोर टूटी; पतवार कर से छूटी।
मरने को हूं भंवर में, चक्कर लगा रहा हूं॥
करुणा अपार कीजे, लक्ष्मण को प्राण दीजे।
अरदास है कुशल की विनती सुना रहा हूं॥

[हनुमान का सुषेन सहित प्रवेश]

सुग्रीव—(राम से) लीजिये महाराज ! वैद्य जी आ गए हैं !

राम—वैद्यराज ! प्रणाम ! कृपा करके लक्ष्मण की नाड़ी देखिये और यदि हो सके तो रोग का कोई उपचार बतलाइये ।

सुषेन—(नाड़ी देखकर) महाराज ! लक्ष्मण जी के मर्मस्थान पर चोट आई है !

राम—तो क्या इसका कोई उपाय नहीं है ?

सुषेन—उपाय तो है ! परन्तु.....

राम—परन्तु क्या ? बतलाइये वैद्यराज ! शीघ्र बतलाइये ! निराशा में डूबते हुए को कुछ तो आशा बंधाइये ।

सुषेन—महाराज ! इस रोग की केवल एक ही औषधि है परन्तु वह यहां नहीं मिल सकती !

राम—और कहां मिलती है ?

सुषेन—उसे संजीवनी बूटी कहते हैं और वह द्रोणाचल पर्वत पर पैदा होती है ।

हनुमान—तो मैं अभी जाता हूं और उसे लेकर शीघ्र लौट आता हूं ।

सुषेन—हां हां जाईये, परन्तु इतना ध्यान रखिये कि इस रोग के रोगी में कुछ ही घण्टे प्राण रहते हैं । यदि आप संजीवनी लेकर प्रातःकाल तक लौट आएगे तो लक्ष्मण के प्राण अवश्य बच जाएगे ।

हनुमान—बहुत अच्छा वैद्यराज ! मैं पवन के समान जाऊंगा और वाण की तरह वापस आऊंगा । परन्तु इतनी कृपा और कीजिये कि उस बूटी की कोई पहचान बतला दीजिये ।

सुषेन—जिस स्थान पर वह बूटी उगती है वह स्थान रात्रि में प्रकाशित रहता है ।

हनुमान—बहुत अच्छा ! अब जाता हूं ।

राम—हनुमान जी ! इस कार्य को अपना ही जानना और शाघ्र लौट आने में ही कल्याण मानना ।

हनुमान—आप निश्चित रहें महाराज ? जरा भी विलम्ब न होगा !

दृश्य चौदहवां

(रावण दरबार)

रावण—पियो पिलाओ ? विजय के उपलक्ष में आनन्द मनाओ और अप्सराओं को बुलवाकर नाच रंग कराओ ?

मन्त्री—जैसी आज्ञा महाराज ? (द्वारपाल से) द्वारपाल ? गाने वालियों को हाजिर करो ।

द्वारपाल—जो आज्ञा श्रीमान । (जाना)

मन्त्री—साकी ?

भर-भर के जाम सब को बराबर पिलाये जा ।
मदिरा के साथ-साथ ही मस्ती लुटाए जा ।।

मेघनाद—साकी ! ओ साकी !

बोतल का आज उड़ता हुआ काग चाहिये ।
गम को जलादे आज वही आग चाहिये ।।

साकी—लीजिये महाराज ! ऐसी ही लीजिये !

खिलता हुआ शराब का नक्शा है देखिये ।
बहता हुआ सरूर का दरिया है देखिये ।।

सभासद—साकी ? जरा इधर भी ।

बैठे हुए हैं आस में तोबा को तोड़ कर ।
जाता है किस तरफ को खरीदार छोड़कर।।

[सबका शराब पीना, अप्सराओं का आना]

अप्सरा— गाना

गुजरी है रात किस तरह जख्मी जिगर से पूछ।
किस दिल पै तीर चल गये अपनी नजर से पूछ॥
तेरे विरह की आग में जलती हूं किस तरह।
मुझ से न पूछ रोज के आठों पहर से पूछ॥
गलियों से पूछ कैसे गुजरता है दिन मेरा।
कटती है रात किस तरह जालिम सहर से पूछ॥
आता नहीं है चैन मुझे रात दिन 'कुशल'।
उठती है दिन में जो मेरे गम की लहर से पूछ॥

रावण—वाह वाह ? आज तो आनन्द लुट रहा है ? खुशी की लहरें आ रही हैं ? मेघनाद ? तू वास्तव में बलधाम है, लक्ष्मण को मारना तेरा ही काम है। अब राम अकेला क्या करेगा, स्त्री और भाई के वियोग में सड़ मरेगा :—

समझ ले आज ओ शत्रु तेरी निश्चय पराजय है।
तुझे कहना पड़ेगा एक दिन रावण तेरी जय है॥

सब—रावण तेरी जय है ?

घनाद—अभी क्या है ! देखते जाइये पिता जी ? एक-एक की छाती को इसी प्रकार तोड़ूंगा जितने लंका पर चढ़ कर आये हैं एक को भी जीवित न छोड़ूंगा :—

जब बिगुल संग्राम भूमि में बजेंगे देखना।
सैंकड़ों अम्बार लाशों के लगेंगे देखना॥

रावण—क्यों नहीं ? मुझे तुम से ऐसी ही आशा है :—

युद्ध में करके पराजित इक न इक दिन राम को,
है मुझे विश्वास तू रोशन करेगा नाम को।

[illegible]—(आकर) महाराज की जय हो ? रामदल में लक्ष्मण के रोग का उपचार किया जा रहा है ?

रावण—(आश्चर्य में) उपचार किया जा रहा है ?

दूत—हां महाराज, संजीवनी बूटी लाने के लिये हनुमान द्रोणाचल पर्वत पर जा रहा है ? यदि वह प्रातःकाल से पहले बूटी ले आयगा तो लक्ष्मण ठीक हो जाएगा।

रावण—कदापि नहीं ! मैं ऐसा न होने दूंगा ! जाओ ! इसी दम कालनेमि को बुला कर लाओ।

दूत—जैसी आज्ञा महाराज ! (जाना)

रावण—यदि लक्ष्मण ठीक हो गया तो अनर्थ हो जायगा; राम को हराना कठिन ही नहीं असम्भव हो जायेगा।

कालनेमि—(आकर और प्रणाम करके) क्या आज्ञा है महाराज !

रावण—देखो कालनेमि ! तुम लंका के पुराने हितैषी और हमारे आज्ञाकार हो। साथ ही साथ कपट की चालों में होशियार हो। इसलिये तुरन्त चले जाओ और कपट का कोई गहरा जाल फैलाओ !

कालनेमि—क्या करना होगा महाराज !

रावण—देखो ! हनुमान संजीवन लेने के लिये द्रोणाचल जा रहा है। तुम मार्ग में पहुंच कर कोई मायावी जाल फैलाओ और हनुमान को चक्रों में फंसाओ, जिससे वह पर्वत पर न पहुंचने पाये और यूयं निकल आये।

कालनेमि—जैसी आज्ञा महाराज !

रावण—देखो ! यदि यह काम बनाकर लाओगे तो मुंह मांगा पुरस्कार पाओगे। जाओ !

[कालनेमि का प्रणाम करके जाना, परदा गिरना]

दृश्य पन्द्रहवां

(रास्ता)

कालनेमि—द्रोणाचल पर्वत को जाने का मार्ग यही है। इसलिये मैं

यहां माया का एक सरोवर, मन्दिर तथा सुन्दर बागीचा बनाकर साधुवेश में अपना आसन जमाता हूं और पवन सुत को बातों में लगाता हूं।

[कालनेमि का सरोवर आदि बनाकर साधु वेश में बैठ जाना और गाना]

गाना

दयासिन्धु करुणा का भण्डार तू है।
निराधार जीवों का आधार तू है॥
सगुण और निर्गुण, दिगम्बर, उजागर।
है साकार तू ही निराकार तू है॥
रचाई है सृष्टि यह माया ने तेरी।
अनेकों ही लोकों का करतार तू है॥
करेगा तू ही पार भव सिन्धु से भी।
कुशल मेरी नौका की पतवार तू है॥

[हनुमान का प्रवेश]

हनुमान—अहा प्यास बहुत लग रही है और कुछ-कुछ थकान भी होने लगी है। सामने किसी मुनि का सुन्दर आश्रम जान पड़ता है इसलिये कुछ देर को वहीं चलू और मुनि से पूछ कर जल पीऊं (जाना)

कालनेमि—(हनुमान को आते देखकर) जय! कौशलाधीश श्री रामचन्द्र की जय! संकट मोचन, पतित पावन भगवान की जय!

हनुमान—(हाथ जोड़कर) मुनिवर प्रणाम!

कालनेमि—जीवित रहो! कल्याण हो!

हनुमान—मुनिराज! आजकल राम-रावण संग्राम हो रहा है इस का क्या परिणाम निकलेगा?

कालनेमि—हां! यह संग्राम मैं अपनी ज्ञानदृष्टि से साक्षात देख रहा

हूं ! इस युद्ध में निस्सन्देह राम की जीत होगी और दुष्टों का सहार होगा !

हनुमान—धन्य हो महाराज। अच्छा मुनिवर ! मुझे प्यास बहुत लग रही है। यदि कुछ जल हो तो मेरी तृष्णा बुझा दीजिये।

कालनेमि—(कमण्डल देकर) लो। इसमें कुछ जल है। इसे पीकर अपनी प्यास बुझा लो ! और फिर उपदेश लो।

हनुमान—महाराज ! इस थोड़े से जल से मेरी तृप्ति नहीं हो सकती।

कालनेमि—अच्छा तो सामने सरोवर पर चले जाओ और अच्छी तरह अपनी प्यास बुझाओ। परन्तु लौटकर फिर मेरे पास आना, और गुरुमन्त्र लेते जाना।

हनुमान—बहुत अच्छा मुनिवर।

[हनुमान का सरोवर में घुसकर जल पीना और डाकनी का पांव पकड़ना]

हनुमान—हैं। मेरे पैरों से यह कौन चिपट गया।

[हनुमान का पैर से दांबकर डाकिनी को मारना और उसका दिव्य शरीर पाकर प्रकट होना]

डाकिनी—धन्य हो। रामभक्त हनुमान आप को धन्य हो।

हनुमान—हैं ! तुम कौन हो ? और यहां किस प्रकार आई हो ?

डाकिनी—हे नाथ ! मैं स्वर्ग की अप्सरा हूं। मुनि के शाप से डाकिनी बनकर इस सरोवर में पड़ी हुई थी, आज आप के चरण छूकर मेरा कल्याण हो गया। देखिये महाराज ! वह मुनि नहीं है रावण का भेजा हुआ राक्षस है जो आपके मार्ग में बाधा डालने के लिये कपट का वेश बनाकर बैठा हुआ है। आप इससे सावधान रहिये, मैं अपने लोक को जाती हूं।

[डाकिनी का जाना और हनुमान का मुनि के पास आना]

कालनेमि—आओ पुत्र बैठो ! अब मैं तुम्हें गुरुमन्त्र देता हूं।

हनुमान—नहीं महाराज ! पहले गुरू दक्षिणा ले लीजिये और फिर उपदेश दीजिये ! (मुष्टिक मारना)

कालनेमि—अरे रे रे। मैं तो मर गया। दुष्ट का साथ देने का फल अच्छी तरह मिल गया।

[कालनेमि का मरना और हनुमान का आगे बढ़ना, परदा गिरना]

दृश्य सोलहवां

(द्रोणाचल पर्वत)

हनुमान—(आकर और चारों ओर अच्छी तरह देखकर) हैं ! यहां तो सारी बूटियां समान दिखाई देती हैं। संजीवनी तो पहचानी ही नही जाती। अब क्या करूं ? कौन सी बूटी ले चलूं। हे विधाता बड़ी दुविधा में पड़ गया हूं। हाय ! हाय ! अब किस से पूंछू ? कहां जाऊं ?

गाना (महाशोक में)

बता दे कोई अब सँजीवन कहां है ?
मेरे प्राणजीवन का जीवन कहां है ?
सभी बूटियाँ जगमगा सी रही हैं ?
मैं ढूंढूं कहां सुख का साधन कहां है ?
घुला जा रहा इसी शोक में मैं।
संजीवन नहीं है ता लक्ष्मण कहां है !
जिसे देख दिल की कली मुस्कराये।
वह आशाओं का मेरी उपवन कहां है ?
उसे ला के छोड़ूंगा इक बार कह दे।
लखन ! तेरे जीवन का साधन कहां है ?

(आकाश की ओर देखकर) हे विधाता, मुझे मार्ग दिखलाओ !

मेरी सहायता करो। (कुछ सोचकर) हां यही ठीक है अब अधिक देर न करूं और सारे पर्वत को उठा ले चलूं। परन्तु रात थोड़ी रह गई है भूमि मार्ग से चलने में अधिक समय लगेगा इसलिये आकाश मार्ग से चलना चाहिये

[पर्वत को उखाड़ कर आकाश मार्ग से उड़ना, परदा गिरना]

दृश्य सत्रहवां

(अयोध्या में भरत का आश्रम)

भरत— गाना (लहद में रोशनी के···)

कहां सन्तोष हो जब राम का दर्शन नहीं होता;
सरोवर में बिना जल मीन का जीवन नहीं होता।
वह मन्दिर क्या है खण्डहर है न जिसमें देव की प्रतिमा;
वह घर अंधेर है दीपक जहां रोशन नहीं होता।
अयोध्या दीन बेचारी बनी है शोक-घर सारी;
रहें क्या प्राण ही प्राणों का जब साधन नहीं होता।
प्रजा सन्ताप सहती है दुखी दिन रात रहती है;
यही होता भी है जब राज़ का बन्धन नहीं होता।
दयासागर दया कीजे कुशल को शान्ति दीजे;
विरह सन्ताप अब मुझसे सहन भगवन नहीं होता।

(आकाश में देखकर) हैं! यह आकाश मार्ग में कौन जा रहा है यह तो बड़ा ही विशाल पर्वत उठाकर ला रहा है। प्रतीत होता है कि कोई राक्षस है जो प्रभु को आघात पहुंचाने के लिये बढ़ा जा रहा है। और उन पर गिराने के लिए पर्वत उठाए जा रहा है अच्छा अब बिना गांसी का वाण मार कर इसे नीचे गिराता हूं अपने मन का सन्देह मिटाता हूं।

[भरत का वाण मारना, हनुमान का नीचे गिरना]

हनुमान—आह राम। मैं विवश हो गया। अब प्रातःकाल से पहले आप के पास कैसे पहुंच पाऊंगा ? क्षमा करना ! हे प्रभु ! क्षमा करना ! (मूर्छित हो जाना)

भरत—(घबराकर) हैं ! यह कौन ! राम का भक्त ! बड़ा अपराध हुआ, बडी भयंकर भूल हुई। (हनुमान के मुख पर जल डालना) हे विधाता ! क्या मैं सारे जीवन राम से बैर ही करता रहूंगा, क्या प्रभु के कुछ भी काम न आऊंगा ! (बेचैन होकर) सुनो! हे कपि राज, सुनो, यदि मैं मन, कर्म, वचन से प्रभु के चरणों में प्रीति रखता हूं। यदि मैंने स्वप्न में भी राम का बुरा नहीं विचारा है तो तुम बाण की चोट से मुक्त हो जाओ और सारी थकान खोकर प्रभु का समाचार सुनाओ।

[हनुमान का सचैत होकर बैठ जाना]

हनुमान—जय ! कोशलाधीश प्रभु राम चन्द्र की जय !

भरत—जय ! भगवान राम की लाखों बार जय! कहो ! कपिराज! तुम कौन हो ? और यह पर्वत उठाए हुए कहां जा रहे हो।

हनुमान—कुछ न पूछो महाराज ! इस समय प्रभु राम चन्द्र जी पर महान संकट आया हुआ है। मेघनाद ने लक्ष्मण को शक्ति वाण से मूछित कर दिया है; मैं उनके लिये संजीवन ला रहा था और सीधा लंका को चला जा रहा था। हे तात् ! मैं किष्किन्धा नरेश सुग्रीव का मन्त्री पवनसुत हनुमान हूं।

भरत—(दुखी होकर) हा देव ! मैं कितना अभागा हूं ! मैंने संसार में जन्म ही क्यों लिया ?

किये हैं पाप ही अब तक न मुंह देखा भलाई का।
जगत में कौन भाई इस तरह शत्रु है भाई का॥

हनुमान—महाराज शान्ति कीजिये ! और मुझे लौट जाने की आज्ञा दीजिये। यदि समय निकल जायगा तो लक्ष्मण का सचेत होना असम्भव हो जायगा।

भरत—कपिराज ! तुम्हें जाने में देर लगेगी इसलिये पर्वत सहित मेरे वाण पर बैठ जाओ और तुरन्त लंका में पहुंच कर प्रभु का संकट मिटाओ !

हनुमान—नहीं महाराज ! मैं आप के प्रताप से वाण के समान ही जाऊंगा, प्रभु के वास्ते पवन बन जाऊंगा ।

भरत—अच्छा प्यारे ! अब देर न लगाओ और तुरन्त चले जाओ !

[हनुमान का जाना, परदा गिरना]

दृश्य अट्ठारहवां

(रामादल की छावनी)

राम— गाना (सोहनी)

उठ लगो भाई गले से दुख सहा जाता नहीं ।
आँख से आंसू बहे, सन्तोष मन पाता नहीं ।।
देख सकते थे नहीं व्याकुल मुझे तुम लक्ष्मण ।
ध्यान तक तुम को मेरे रोने पे अब आता नहीं ।।
तू ने जिस भाई के कारण तज दिये माता पिता ।
सच बता दे भ्रात क्या अबवह तेरा भ्राता नहीं।।
मार कर सुख-सम्पदा पर लात तू आया लखन ।
अब तेरा आँखें बदलना क्या सितम ढाता नहीं ।।

लक्ष्मण ! मेरे जीवन के आधार लक्ष्मण ! मेरी कामनाओं के चित्र लक्ष्मण, तुम कहां हो ? तुम्हारा वह सच्चा प्रेम कहां है ? :—

सहन संकट किये दुनिया के मेरे वास्ते तूने ।
चुने हैं फूल ही श्रद्धा के मेरे वास्ते तूने ।।
बता दे आज तू ही सोचकर वह प्यार क्या भूलूं।
तेरे उपकार हैं मुझ पर तेरा उपकार क्या भूलूं ।

सुग्रीव—महाराज ! इतने व्याकुल तो न होइये !

राम—व्याकुल कैसे न होऊं सुग्रीव जी ! मेरा अब कौन है जो मन को धीरज बंधायेगा ! हाय-हाय ! ऐसा आज्ञाकार भाई कहां से आयगा ? :—

सुखी के लाख साथी हैं नहीं दुख का सहाई है।
सभी मिलता है पर मिलना बड़ा दुश्वार भाई है॥

विभीषण—यह तो ठीक है महाराज ! परन्तु रोने से क्या फल मिलेगा धैर्य खोने से क्या परिणाम निकलेगा ?

राम—क्या बताऊं विभीषण जी !

दिया था हाथ में भाई का मेरे हाथ माता ने।
किया था प्रेम से हम को विदा इक साथ माता ने॥
बताओ अब वहां मैं कौनसा मुंह लेके जाऊंगा।
पता पूछेंगी लक्ष्मण का तो मैं फिर क्या बताऊंगा॥

विभीषण—फिर भी इतने घबराने की बात ही क्या है महाराज ! हनुमान जी संजीवन लेने के लिये गये ही हैं। अब केवल उनके आने की देर है !

राम—(आकाश की ओर देखकर) यह तो ठीक है, परन्तु वह देखो ! पूर्व दिशा में हल्की-हल्की लालिमा नजर आने लगी है जो प्रातःकाल के समीप होने की सूचना बताने लगी है। आह ! अब क्या होगा? यदि अब भी हनुमान न आये तो क्या होगा? आह विधाता !

गाना

गुजरती हुई रात भी जा रही है।
यह पापिन सितम पर सितम ढा रही है॥
उमीदों का दीपक तो गुल हो रहा है।
निराशा की काली घटा छा रही है॥

लगी डगमगाने सी जीवन की नौका।
प्रलय-काल आंधी चली आ रही है॥
उधर डब-डबाने लगे हैं सितारे।
इधर बेबसी भैरवी गा रही है॥
'कुशल' अब पवन-सुत की पल-पल की देरी।
मुझे काल का रूप दिखला रही है॥

बोलो लक्ष्मण ! अब तो बोलो ! हे भाई अब तो मौन खोलो आह ! मैं क्या जानता था कि वन में भाई का वियोग होगा यदि यह जानता तो पिता के वचनों को भी न मानता !:—

बुरा बनकर ही जी लेता सहन करता बुराई को।
जगत की गालियां सहता, मगर खोता न भाई को।।

सुग्रीव—(हनुमान को आते देखकर) लीजिये महाराज ! वह देखिये हनुमान जी चले आ रहे हैं ! ओहो ! कैसी शीघ्रता से पांव बढ़ा रहे हैं।

राम—(देखकर) आये ! आये ! और मेरे जीवन का सन्देश भी लाये ?

[हनुमान का प्रवेश]

सब वानर—(प्रसन्न होकर) बोलो भगवान राम की जय ! पवनसुत हनुमान का जय !

हनुमान—(राम के चरणों में गिर कर) भगवन् प्रणाम !

राम—धन्य हो ! केसरी नन्दन ! तुम धन्य हो !

सुषेनवैद्य—लाइये हनुमान जी ! संजीवन लाइये ! अब और देर न लगाइये !

हनुमान—वैद्यराज ! मैं संजीवन को पहचान न पाया इसलिये सारा पर्वत ही उठा लाया। अब बूटी की पहचान स्वयं कर लीजिये और लक्ष्मण को प्रणदान दीजिये !

सुषेन—(बूटी को लक्ष्मण के मुख में निचोड़ कर) लक्ष्मण जी अब चेत जाइये।

लक्ष्मण—(उठकर) कहां है ? वह अभिमानी मेघनाद कहां है ?

राम—शान्त ! भाई लक्ष्मण ! शान्त । तुम ने नया जीवन पाया है, शक्तिबाण के आघात से अभी होश आया है । क्रोध में न भरो ! थोड़ी देर शान्त होकर आराम करो !

सब—बोलो, मंगलकारी भगवान की जय !

हनुमान—चलिये वैद्यराज! अब में आपको नगरी में पहुंचा आता हूं ।

(हनुमान का सुषेन को लेकर जाना)

[आरती पर ड्राप सीन]

ग्यारहवां अंक

दृश्य पहला

(अशोक वाटिका)

[राम के वियोग में सीता जी दुखी हैं, राक्षसियां पहरा दे रही हैं]

सीता— गाना (मल्हारराग)

स्वामी तुम बिना रैन कटी ना बिलक-बिलक कर भोर भई है।
दामनि दमके, मेघा बरसे-विरहिन का जीयरवा तरसे,
नन्हीं नन्हीं पड़त फुवार, कोयल बन में कूक रही है।
स्वामी तुम बिन……
कैसे काटूं रैन अन्धेरी-सुख देखा ना दुख ने घेरी,
न कछु तुमरा मरम है जाना, ना कुछ मन की आप कही है,
स्वामी तुम बिन……

[रावण का प्रवेश]

रावण—कहो जनकनन्दनी ! क्या विचार है ? मेरा कहना मानती है या मौत स्वीकार है ?

सीता—मौत !

रावण—क्यों ?

सीता—इसलिये कि :—

मौत आ जाये तो छूट जाऊं विरह जजाल से।
मेरे बन्धन कट सक तो कट सकेंगे काल से॥

रावण—सीते ! क्या तू पागल हो रही है जो उन तपस्वियों की याद में प्राण खो रही है :—